चन्दामामा
दिसम्बर १९९१
4 रु

चन्दामामा

दिसम्बर १९९१

★

अगले पृष्ठों पर

★

एक प्रति : ४ रुपये
वार्षिक चन्दा : ४८ रुपये

CASIO
ताल मिलाओ
धूम मचाओ!
© 1991 CASIO
अब झूमिए मस्ती में कैसिओ कीबोर्ड के साथ, क्योंकि इसमें है सुर और ताल का ऐसा अनोखा मेल कि
आपका दिल गा उठे और कदम थिरकने लगें अपनी मनपसन्द धुनों के साथ। तो बस शुरू हो जाइये और
फैला दीजिये अपनी मस्ती का रंग और कैसिओ की उमंग, चारों ओर!
SOUND KIDS
RAP-1
SA-21
KS-02
CITY MUSIC CO., PTE LTD.
Singapore Tel: 3377058, 3377545
ONFLO MUSIC CO., LTD.
Hong Kong Tel: 722 4195
RAINBOW PHOTO FINISHERS PTE LTD.
Nepal, Kathmandu Tel: 221724
GENERAL ENTERPRISES COMPANY
U.A.E., Dubai Tel: 224131/2/3
MAHMOOD SALEH ABBAR CO.
Saudi Arabia, Jeddah Tel: (02)6473996
ARABIAN CAR MARKETING CO.,LTD.
Oman Tel: 793741
CASIO COMPUTER CO., LTD.
Tokyo, Japan.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

क्षमा-दान

मैत्री और क्षमा—नयी दिल्ली में हाल ही में हुए एक सम्मेलन के यही दो मुख्य प्रकरण थे । विचार कितना बढ़िया है । दरअसल, ये दोनों प्रकरण उसी भाव का विस्तार हैं जिसे हम अक्सर सार्वभौम भ्रातृत्व और शांति के नाम से पुकारते हैं ।

आखिर, हर किसी को इस पृथ्वी पर रहना है, और यह भी सच है कि कोई सबसे अलग-थलग पड़कर नहीं रह सकता । सभी को समाज में रहना है और सभी का हिस्सा इस समाज में बराबर का है । मैत्री का आधार यही भाव हो सकता है ।

मित्र एक-दूसरे को हानि नहीं पहुंचाते । अगर इत्तफ़ाक से वे किसी की भावनाओं को ठेस पहुंचाते भी हैं या दूसरों के लिए परेशानी का कारण बनते हैं तो वे क्षमा-याचना करते हैं और क्षमा उन्हें हमेशा मिल भी जाती है । कहावत भी तो है कि गलती इंसान करते हैं; देवता उस गलती को माफ करते हैं ।

क्षमा-दान में सहनशीलता निहित है । "मुझे ध्यान से सुन-तू बदी को नहीं रोकेगा । जब कोई तेरे दायें गाल पर आघात दे तो तू उसकी तरफ अपना बायां गाल भी कर देगा ।" ये शब्द बाइबल में सेंट मैथ्यू के हैं । ऐसे क्षमा-दान के भाव से बढ़कर कोई और भाव भी हो सकता है!

नयी दिल्ली में उस सम्मेलन को संबोधित करते हुए प्रधान मंत्री ने कहा कि अहिंसा और क्षमा के भावों को बढ़ावा मिलना चाहिए और उन्हें फूलना-फलना चाहिए । मित्रों और राष्ट्रों में उन्हें समान रूप से पनपने का अवसर मिलना चाहिए । तभी क्रिस्मस की इस भवना को प्रसार मिलेगा कि पृथ्वी पर शांति हो और आदमी-आदमी के बीच सद्भावना बढ़े ।

वर्ष : ४४ | दिसम्बर १९९१ | अंक : ४

एक प्रति : रु. ४/- | वार्षिक चन्दा : रु. ४८/-

नई
उमर के
नये रंग
मौज ही मौज
स्कूल में आए
नए फ़ेविक्रिल
स्टूडेंट पोस्टर कलर्स
ऐसा रंग जमाएं
रंग मुलायम उभरा-उभरा
तोता–हरा-हरा लगे खरा
चटख लाल, नीला,
चमकीला
सफेद निराला ज्यों बर्फीला
हर रंग अलबेला
तो झटपट चित्रों में रंग भरो
नए फेविक्रिल स्टूडेंट
पोस्टर कलर्स के संग
मौज करो !
देख तुम्हारा काम और
इसका दाम मम्मी हुई हैरान !
मुफ़्त
पेंट-ए-पोस्टर
नए
फ़ेविक्रिल®
स्टूडेंट
पोस्टर कलर्स
मुफ़्त
STUDENTS' POSTER CO
Fevicry
मुफ़्त
पेंट-ए-पोस्टर
नाम :
उम्र :
पता :
स्कूल

इतिहास पलट गया है

इसी वर्ष १७ सितंबर को तीन बाल्टिक राज्यों-एस्टोनिया, लैटिविया तथा लिथआनिया को संयुक्त राष्ट्र की महासभा के ४६ वें सत्र में स्वाधीन राष्ट्रों के नाते पूर्ण सदस्यता प्रदान की गयी । ऐसी सदस्यता प्राप्त करनेवाले कुल सात राष्ट्र थे । बाकी चार राष्ट्र थे दक्षिणी और उत्तरी कोरिया तथा प्रशांत द्वीप-राष्ट्र मिकरोनेशिया और मार्शल द्वीप ।

बाल्टिक राज्यों को सोवियत संघ से स्वाधीनता मिलने के कुछ ही दिनों के भीतर संयुक्त राष्ट्र की सदस्यता प्राप्त हो गयी । एक समय था कि ये राज्य रूसी साम्राज्य के अंग थे, लेकिन १९१७ की क्रांति के बाद उन्हें ज़ार साम्राज्य से मुक्त कर दिया गया । फिर दूसरा विश्व युद्ध (सितंबर १९३९) शुरू हुआ और उसके बाद जल्दी ही सोवियत नेता जोसेफ स्टालिन तथा जर्मन नेता अडोल्फ हिटलर के बीच हुए समझौते के तहत ये तीनों राज्य १९४० में सोवियत संघ में मिला लिये गये । आधी शताब्दी तक ये राज्य सोवियत आधिपत्य तले तिलमिलाते रहे और उस समय की प्रतीक्षा करते रहे जब वे अपनी स्वाधीनता घोषित करेंगे ।

सबसे पहले मार्च १९९० में लिथआनिया ने अपनी स्वाधीनता घोषित की । बाद में, अगस्त के महीने में जब राष्ट्रपति गोर्बाचोव कोई ७० घंटों के लिए सत्ता से बाहर थे, तो एस्टोनिया और लैटिविया ने इस स्थिति से लाभ उठाकर सोवियत संघ से अपना अलगाव घोषित कर दिया । मास्को लौटकर और सत्ता फिर से अपने हाथ में लेने के बाद सोवियत राष्ट्रपति ने इन तीनों गणतंत्रों की स्वाधीनता को स्वीकृति प्रदान करने की

सहमति दे दी । ६ सितंबर को सोवियत संसद ने इस स्वाधीनता को मान्यता दे दी और इस तरह ५१ वर्ष के इतिहास को पलट दिया गया ।

फिर संयुक्त राष्ट्र की सदस्यता के लिए औपचारिक प्रार्थना-पत्र दिया गया, जिसे पहले सुरक्षा परिषद् ने मंजूरी दी और बाद में महासभा द्वारा भी मंजूरी दे दी गयी । १९१७ और १९४० के दौरान, जब ये तीनों राष्ट्र आत्म-निर्णय का अधिकार रखते थे, तब ये पुरानी लीग ऑव नेशंस के सक्रिय सदस्य थे । संयुक्त राष्ट्र में प्रवेश पा जाने के बाद लैटिविया के राष्ट्रपति एनाटोली गोर्बूनोव्स के शब्द इस प्रकार थे : "विश्व समुदाय को अपने परिवार के वे सदस्य वापस मिल गये हैं जिन्हें उसने दूसरे विश्व युद्ध के दौरान खो दिया था ।"

संयुक्त राष्ट्र के महासचिव पैरी दकूइया ने झंडा फहराने की रस्म के अवसर पर टिप्पणी की कि संयुक्त राष्ट्र ने सार्वभौम सदस्यता का लक्ष्य प्राप्त करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठाया है ।

तीनों बाल्टिक राष्ट्रों के राष्ट्रपतियों ने, जो संयुक्त राष्ट्र में उपस्थित थे, इस बात पर ज़ोर दिया कि वे सोवियत संघ के साथ अपने राजनीतिक और आर्थिक संबंध बनाये रखना चाहते हैं, लेकिन साथ ही यह भी कहा कि सोवियत संघ को उनके इलाके से तुरंत सेना हटा लेनी चाहिए । "हमारी इच्छा है कि हम आपस में अच्छे पड़ोसी बनकर रहें ।" उन्होंने कहा ।

सफल व्यापारी

सीतापुर नाम के एक गांव में रामआसरे नाम का एक व्यापारी रहता था । उसकी पंसारी की दुकान थी । पर वह दुकान ज्यादा चलती नहीं थी ।

रामआसरे का एक बेटा था । उसका नाम मैथिलीशरण था । वह पिता के साथ ही दुकान पर बैठता था और पिता की मदद करता था । रामआसरे का एक ही सपना था कि उसका बेटा एक कुशल व्यापारी बने और खूब कमाये ।

एक दिन रामआसरे के यहां पड़ोसी गांव से उसका साला मोहनदास आया । बातों-बातों में उसने जान लिया कि रामआसरे की क्या परेशानी है । बोला, "आप मेरी बात पर ज़रा ग़ौर कीजिए, जीजा जी । मेरी राय में अगर आप ज्यादा नहीं कमा पाये हैं तो इसका कारण आपके भाग्य का दोष नहीं है, इसका कारण दूसरा है । आप व्यापार के गुर नहीं जानते । हमारे गांव में भगवानदास नाम का एक व्यापारी है । उसका व्यापार खूब चलता है । मैं चाहता हूं कि मैथिली को भगवानदास के यहां नौकरी पर रखवा दूं । वहां वह व्यापार की सभी बारीकियां समझ जायेगा । एक बार समझ गया तो तरक्की करते उसे देर नहीं लगेगी ।"

रामआसरे अपने साले का प्रस्ताव मान गया और उसने मैथिली को उसके साथ जाने की इजाज़त दे दी । अगले दिन ही मैथिली, मोहनदास के साथ उसके गांव के लिए रवाना हो गया । गांव पहुंचकर मोहनदास, मैथिली को भगवानदास के यहां ले गया । और उससे बोला, "यह मेरा भतीजा मैथिलीशरण है । मैं चाहता हूं कि यह आपके यहां व्यापार की बारीकियां सीखे ।"

मैथिली अब भगवानदास की दुकान पर बैठने लगा था । एक दिन वहां भूषण नाम का एक व्यक्ति कुछ ख़रीदारी करने आया । उसने अच्छी किस्म के उड़द मांगे जो मैथिली

स्मृति सिन्हा

ने दिखा दिये । पर भूषण को इससे संतोष नहीं हुआ । उसने उससे भी बढ़िया उड़द मांगे । मैथिली चक्कर में पड़ गया । बोला, "ये तो सबसे बढ़िया उड़द है । इससे बढ़िया तो हमारे यहां है ही नहीं ।"

यह उत्तर पाकर भूषण वहां से जाने को हुआ । तभी भगवानदास ने उसे रोका और मैथिली से बोला, "बेटा, रात को नया माल आया है न । वहां, उस कोने में पड़ा है । इन्हें दिखाओ वह ।"

मैथिली को जैसा आदेश मिला, उसने वैसा ही किया । पर यह तो वही माल था जो उसने भूषण को दिखाया था । भूषण ने उसे देखते ही स्वीकृति में अपना सर हिला दिया और ख़रीदारी करके वहां से चला गया ।

मैथिली बड़े अंचभे में था । वह भगवानदास से पूछे बिना न रह सका, "ये दोनों उड़द तो एक ही तरह के थे । इनमें फर्क कहां था ?"

"फर्क था, बटे । पर यह फर्क भूषण की आंखों में था । उसे बढ़िया-वड़िया की कोई पहचान नहीं । ऐसे लोग केवल उपरी दिखावा करते हैं । उन्हें ये संदेह रहता है कि हम उन्हें धोखा देते हैं । इसीलिए वे पारखी होने का ढोंग करते हैं । उन्हें वही माल दूसरी बार दिखा दो तो वे झट मान जाते हैं ।" भगवानदास ने सहज होकर कहा ।

एक और दिन गिरिधर नाम का एक ग्राहक आया । उस समय दुकान पर काफी ग्राहक थे और सभी को बारी-बारी से निपटाना था । पर गिरिधर तो हवा के घोड़े पर सवार होकर आया था । वह मैथिली को सामान की सूची थमाते हुए बोला, "मुझे बहुत जल्दी है । एक बेहद जरूरी काम से जाना है । इसलिए मुझे यह सामान तुरंत बंधवा दो ।"

मैथिली ने एक क्षण उसकी ओर देखा और फिर बडी मृदुता से बोला, "महोदय, आपको थोड़ा इंतजार करना होगा । आपसे पहले के और कई ग्राहक खड़े हैं ।"

मैथिली की बात सुनकर गिरिधर गुस्सा खा गया । वह तुरंत वहां से चला जाता, लेकिन भगवानदास ने अपने चेहरे पर भरपूर मुस्कराहट बिखेरते हुए कहा, "आप एक मिनट बैठिए । पहले आपका ही काम होगा ।" फिर उसने बगल में देखकर क़हा,

"अरे, कौन है वहां? पहले गिरिधरजी का सामान निकालो । और हां, इनके लिए ठंडे पानी का एक गिलास भी लाओ । लगता है काफी दूर से चले आ रहे हैं ।"

भगवानदास की बात सुनकर गिरिधर खुश हो गया और भगवानदास के पास ही बैठ गया । दूसरे ग्राहकों का सामान बंधता रहा । गिरिधर का सामान तभी बांधा गया जब उसकी बारी थी । तब भी गिरिधर इत्मीनान से बैठा रहा । आखिर, जब उसका सामान बंध गया तो वह उसके दाम चुकता करके वहां से चला गया । किसी तरह की उसने कोई शिकायत नहीं की ।

भगवानदास से मैथिली ने फिर सवाल किया, "महोदय, गिरिधर का रवैया मेरी समझ में बिलकल नहीं आया । मेरी बात पर उसे गुस्सा आ गया । और आपने कहा तो वह आराम से बैठ गया और उसका सामान उसे तभी मिला जब उसकी बारी आयी । इसका क्या कारण हो सकता है?"

"कुछ ग्राहक ऐसे होते हैं, मैथिली बेटे, जो विशेष सम्मान चाहते हैं । वे चाहते हैं कि हर बात में उन्हीं पर पहले ध्यान दिया जाये । बस, सबके सामने उनके साथ खास इज्जत से पेश आओ तो उनके अहम की तुष्टि हो जाती है ।" मैथिली की शंका दूर करते हुए भगवानदास बोला ।

एक दिन एक दूसरी तरह का ग्राहक भगवानदास की दुकान पर आया । सामान तो उसने लिया, पर पैसे देने के नाम पर बोला

कि वह एक हफ्ते में चुकता करेगा । मैथिली ने उसी समय उस हिसाब को बही में लिखना चाहा ।

इतने में भगवानदास बोला, "अरे, जानते नहीं इन्हें? यह तो अपने चित्तरंजन जी हैं । यह यहां से लाखों का माल ले जायें, तब भी उसे बही में लिखने की हमें ज़रूरत नहीं पड़ेगी । अपने आप इनका पैसा हमें वक्त पर आ जाता है ।"

अपनी इतनी प्रशंसा सुनकर चित्तरंजन खुश हो गया, और वहां से चला गया । तब भगवानदास ने मैथिली से कहा, "बेटे, अब उसका हिसाब खाते में उतार लो ।"

"यह क्यों, मान्यवर? पहले तो आपने उसकी उपस्थिति में मना किया था, और अब

कहते हैं कि उस हिसाब को खाते में उतार लिया जाये । मेरी समझ में आपकी यह पैंतरेबाजी नहीं आयी ।" मैथिली ने कहा ।

भगवानदास मैथिली की सादगी पर हंस दिया और बोला, "देखो, व्यापार में हमें किसी पर भी हद से ज्यादा विश्वास नहीं करना चाहिए । लेकिन यह बात संबंधित व्यक्ति पर ज़ाहिर भी नहीं होनी चाहिए । उसे तो यही लगना चाहिए कि हम उस पर अंध-विश्वास करते हैं । इससे वह हमेशा ईमानदारी में बंधा रहेगा । कभी ऐसा भी हो जाता है कि उसे यह रकम चुकाना याद ही न रहे । तब हमें उसे बड़े ढंग से याद दिलाना होगा और जब वह पूछे कि कितनी रकम है तो बही देखकर उसे बता देना होगा ।"

एक साल ऐसे ही बीत गया । कोई विशेष घटना नहीं घटी । तब भगवानदास ने मैथिली से कहा, "बेटे, अब तुम व्यापार के सभी गुर सीख गये हो । पर एक गुर अब भी बाकी है । अच्छा हो, उसे भी जान लो । मनोहर से हमें कुछ कर्ज-वसूली करनी है । उसकी तरफ एक हजार रुपया है । जाओ, उससे यह रकम वसूल कर लाओ ।"

मैथिली ने मनोहर से दो-तीन बार भेंट की और उससे रकम चुकता कर देने को कहा, पर मनोहर तो अपने परों पर पानी ही नहीं पड़ने देता था । उसके रंग-ढंग ही निराले थे । मैथिली को लगा कि वह यह राशि नहीं चुकायेगा । इस पर भी वह भगवानदास की दुकान पर कुछ और सामान लेने आया । उसे देखकर मैथिली को गुस्सा आ गया । बोला, "पहले, पहली रकम चुकाओ । तभी और उधारी मिल पायेगी ।"

इतने में भगवानदास की भी उस पर नज़र पड़ी । उसे देखते ही बोला, "मनोहर । जरूरत पड़ने पर सामान तो ले लो, पर जैसे ही पैसा हाथ लगे, यहां की रकम भी चुकता कर दिया करो । वैसे तो मैं जानता हूं कि तुम से रकम जायेगी कहां । हां, सुना है तुम्हारी बड़ी बेटी की शादी पक्की हो चुकी है । बहुत अच्छी ख़बर है । पर पहली उधारी चुका दोगे तो शादी के मौके पर तुम्हें जो सामान चाहिए, उसे देने में हमें आसानी रहेगी"

मनोहर, भगवानदास की बातों में आ गया । उसने कुछ ही दिनों में पुरानी उधारी

सारी चुकता कर दी । लेकिन एक हफ्ते बाद वह फिर आ पहुंचा और उसने बेटी की शादी के लिए सामान की मांग की ।

भगवानदास ने अपनी हमेशा वाली नम्रता बनाये रखी और बोला, ''मनोहर, बुरा नहीं मानना । इधर व्यापार में काफी मंदी आ गयी है । उधारी पर माल देना बंद कर देना पड़ा है । तुम यह सामान कहीं और से ले लो ।''

भगवानदास, दरअसल, मनोहर के मन की ताड़ गया था । मनोहर एकदम से काफी सामान ले लेना चाहता था और उसे हज़्म कर लेना चाहता था । भगवानदास ने जब उसे उधारी देने से मना कर दिया तो उसका चेहरा लटक गया । साथ ही उसे यह भी समझते देर नहीं लगी कि भगवानदास को उसके मन के खोट का आभास हो गया है । इसलिए वह चुपचाप वहां से खिसक लिया ।

मैथिली, भगवानदास की ओर हैरत से देख रहा था । इस पर भगवानदास बोला, ''वास्तव में मनोहर के पास पैसे की तंगी नहीं है । फिर भी उसे कर्ज़ खाने की बुरी लत पड़ गयी है । ऐसे लोगों से वक्त देखकर ऐसे ही पल्ला छुड़ाना पड़ता है ।''

इसी तरह कुछ दिन और बीत गये । तब भगवानदास ने मैथिलीशरण को अपने पास प्यार से बैठाया और उससे बेला, ''बेटा, अब तुमने व्यापार के सभी गुर सीख लिये हैं । अब तुम अपने गांव लौट जाओ और अपने पिता का व्यापार संभालो ।''

मैथिलीशरण, भगवानदास के प्रति कृतज्ञता से भरा हुआ था । उसने उसके पांव छुए और उससे आशीर्वाद लिया । फिर वह अपने गांव को लौट गया और वहां उसने अपने पिता का कारोबार संभाल लिया ।

इस बार मैथिलीशरण का कारोबार बहुत चमका । अब वह मालामाल होने लगा था । इससे उसके पिता के मन को बहुत संतोष मिला ।

कर्ज़

सुदीप को कचहरी में नयी-नयी नौकरी मिली थी । नौकरी के पहले दिन ही वहां के एक अन्य कर्मचारी सुरेश ने उससे कहा, "तुम्हारा स्वागत है, सुदीप । पर एक बात याद रखना । यहां तुम अभी एक अपरिचित ही हो । इसलिए यहां के लोगों से सावधान रहना । बड़ी अजब आदत है इनकी । किसी के पास कुछ पैसा इन्हें दिख जाये, बस किसी-न-किसी बहाने से उसे ऐंठ लेना चाहेंगे । कर्ज़ मांगने से तो ये रत्ती भर नहीं झिझकते । कर्ज़ दे दिया तो आराम से बैठ ज़ाओ । वापस मांगते-मांगते तुम परेशान हो जाओगे । बस, मुझे इतना ही कहना है ।"

दोनों मित्रों के बीच धीरे-धीरे मित्रता बढ़ती गयी । सुदीप को पहली तनख्वाह मिली तो वह ज़रूरत से ज्यादा सतर्क था । उसने दृढ निश्चय कर रखा था कि चाहे कोई भी उससे उधार मांगे, वह नहीं देगा । पर किसी ने उससे उधार मांगा ही नहीं । ऐसे ही काफी दिन निकल गये ।

एक दिन सुरेश को बाज़ार से कुछ ख़रीदारी करनी थी । उसने सुदीप को भी साथ ले लिया । ख़रीदारी तो उसने कर ली, पर जब पैसा चुकाने लगा तो उसके पास कुछ रकम कम निकली । उसने सुदीप से कहा, "दोस्त, पैसे कम पड़ गये हैं । अब या तो कुछ चीज़ें वापस कर दूं या पहले घर जाऊं और पैसा लेकर आऊं । तुम्हारे पास हों तो कुछ दे दो । कल सुबह कचहरी में तुम्हें लौटा दूंगा ।"

सुदीप ने पैसे दे दिये । दोनों मित्र अपने-अपने घर लौट गये ।

पर काफी दिन बीत गये और सुरेश ने पैसे लौटाने का नाम तक नहीं लिया । सुदीप को थोड़ी परेशानी हुई । कुछ दिन और इंतजार किया । आखिर कहना ही पड़ा ।

तब सुरेश बोला, "तुम भी, यार, अजीब हो । मैं ने पहले दिन ही तुम्हें चेता नहीं दिया था? यहां कर्ज़ तो सब ले लेते हैं, लेकिन लौटाना उन्हें याद नहीं रहता । अब तुम कुछ दिन और आराम करो । जैसे ही मेरे हाथ कुछ फालतू पैसा लगेगा, मैं तुम्हारा कर्ज़ चुकता कर दूंगा ।"

—प्रकाश एस. भास्कर

अपूर्व के पराक्रम

१

[अपूर्व आकार-प्रकार में तो गुड़िया के समान है, पर शक्ति उसमें दानव की है, और साथ में उसमें ईश्वरीय गुण भी हैं । उसने कई लोगों को मौत के मुंह से बचाया है । उधर एक ग्रामीण बालक, समीर के माध्यम से उसने पांच बालकों को समुद्री डाकुओं के चंगुल से बचाया है । इसी प्रकार समुद्री डाकुओं का एक और गिरोह एक द्वीप से छिपाया हुआ खज़ाना बटोरनें जाता है । उस गिरोह के लोग जब शराब में धुत पड़े होते हैं तो अपूर्व अपने साथियों के साथ उस खज़ाने को लेकर वापस समुद्र-तट पर आ जाता है । —अब आगे पढ़िए ।]

नाव में सवार बालक जब तट की ओर बढ़ रहे थे तो कुछ ग्रामवासियों ने उन्हें देख लिया था । तब तक किसी तरह चारों ओर यह खबर फैल गयी थी कि जिन बालकों ने समुद्री डाकुओं को चकमा देकर सिपाहियों के हाथों पकड़वा दिया था, वे फिर न जाने किसी काम पर किसी अज्ञात स्थल की ओर समुद्री यात्रा पर निकल गये हैं ।

"बहादुर समीर और उसके साथी वापस आ रहे हैं," नाव देखते ही उन ग्रामवासियों ने बड़े उत्साह के साथ चिल्लाना शुरू कर दिया और फिर वे अन्य लोगों को इस बात की सूचना देने के लिए गांव की ओर दौड़ पड़े ।

समुद्र तट से दो मील दूर राजा का सुंदर बगीचा था और उस बगीचे के बीचों-बीच झील के निकट, एक छोटा-सा किला था । कभी-कभी राजा हवा बदलने के लिए वहाँ रुकता था । इत्तफाक से वह वहीं था ।
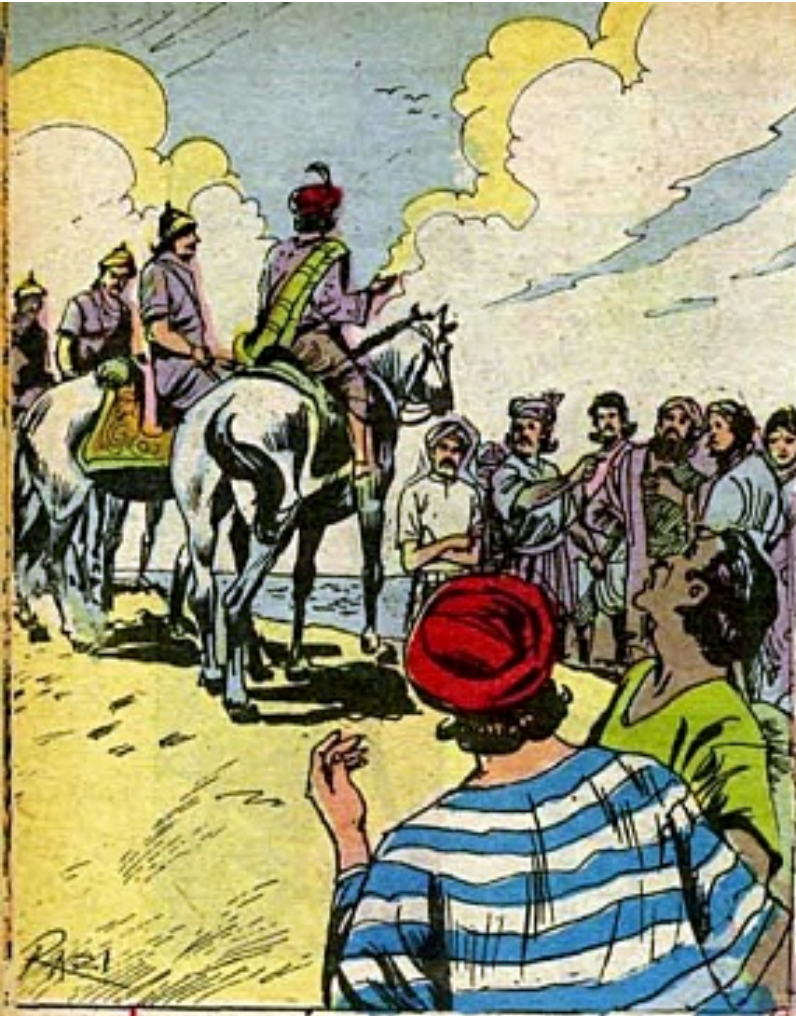
इसलिए बालकों संबंधी यह खबर उसे भी मिली ।

राजा बालकों से बहुत प्रभावित था, समीर से तो और भी । इस लिए उसके मन में इच्छा हुई कि उन्हें एक बार देख लिया जाये । वह उछलकर फौरन अपने घोड़े पर जा बैठा और समुद्र तट की ओर बढ़ने लगा । उसके पीछे-पीछे उसके अंग-रक्षक भी चले आये । बालकों के पिता और रिश्तेदार तो पहले से ही वहाँ मौजूद थे और व्यग्रता से बालकों की प्रतीक्षा कर रहे थे । उन्होंने बड़े आदर से राजा का अभिवादन किया ।

"कुछ पता चला कि ये बालक कहाँ गये थे?" राजा ने वहां गांव के मुखिये को देखकर उस से पूछा ।

"नहीं, राजन्, किसी को भी इस बात का आभास नहीं है ।" मुखिया ने अदब से उत्तर दिया ।

अपूर्व नाव के सिरे पर बैठा था, और तट को बड़े गौर से अपनी ग़ज़ब की तेज़ आंखों से देख रहा था । उसे स्थिति समझते देर न लगी ।

"समीर!" वह बोला, "अब समय आ गया है कि मैं यहां से खिसक लूं । राजा बहुत नेक आदमी है । उससे कह देना कि जो धन तुम लाये हो, उसे गरीबों की भलाई के लिये खर्च किया जाना चाहिए ।"

समीर ने झुककर अपूर्व के प्रति अपना आभार प्रकट किया । उससे यह पूछना तो बेमानी था कि वह कैसे खिसकेगा । समीर को इस बात का पूरा-पूरा विश्वास था कि वह हर असंभव को संभव कर देता था । लेकिन समीर कुछ दूसरे मामलों में उसकी सलाह चाहता था । इसलिए वह फिलहाल यह नहीं चाहता था कि अपूर्व एकदम ग़ायब हो जाये ।

समीर ने कुछ नहीं कहा, लेकिन अपूर्व समझ गया था कि समीर के मन में क्या चल रहा है ।

"मेरे दोस्त," वह समीर से इस के संदेह दूर करते हुए बोला, "राजा को उन बदकिस्मत डाकुओं के बारे में बताओ जो टापू में घिरे पड़े हैं । अगर उनकी खबर न ली गयी, तो वे ऐसे ही भूख-प्यास के मारे खत्म हो जायेंगे ।"

इसके साथ ही अपूर्व कूदकर एक डॉल्फिन

मछली की पीठ पर जा पहुंचा और उस से चिपका रहा, और फिर उसने उसे कोई संकेत दिया ।

डॉल्फिन, जिस दिशा में नाव जा रही थी, उससे थोड़ी भिन्न दिशा में चल दी । समीर अभी देख ही रहा था कि मछली ने अदभुत गति पकड़ ली । वह जानता था कि समुद्र तट पर पहुंचकर अपूर्व दौड़ना शुरू कर देगा और फिर इतना तेज़ दौड़ेगा कि वह हर किसी की नज़र से ओझल हो जायेगा ।

आखिर, नाव समुद्र और नदी के संगम पर पहुंची । वहाँ लहरें कुछ कम थीं । इस लिए वहां सागर का पानी थोड़ा शांत था । कुछ हट्टे-कट्टे ग्रामवासी पानी में ही चले आये और बालकों को नाव से उतरने में और वहां से तट पर पहुंचने में उन्होंने मदद दी ।

राजा का अभिवादन करने के बाद सभी ने उसे बताया कि कैसे वे छिपा ख़ज़ाना यहाँ लाने में सफल हुए । राजा समीर के साथ नाव के पास गया और उसने बड़े आश्चय के साथ अपनी आंखों से देखा कि नाव जवाहिरात की पेटियों से लदी हुई है ।

यह दृश्य देखकर वह बहुत खुश हुआ । इतनी खुशी और हैरानी उसे पहले कभी नहीं हुई थी ।

समीर ने उसे जो सुझाव दिया, उसी के अनुरूप उसने वादा किया कि वह उस धन को गरीबों की भलाई पर खर्च करेगा । उसने समीर से कहा कि वह इसके लिए अपनी कोई योजना बताये ।

"राजन्, मेरी प्रार्थना है कि इस बीच यह धन-दौलत, यहीं आपके बगीचे वाले किले में

रखा रहे । यहाँ यह सरक्षित भी रहेगा ।" समीर बोला ।

"ठीक है । ऐसा ही होगा ।" राजा ने अपनी सहमति व्यक्त की ।

"लेकिन, ज़्यादा जरूरी एक बात और है, राजन् ।" समीर ने कहा ।

"ज़्यादा जरूरी बात! वह क्या है?" राजा ने आश्चर्य से पूछा ।

" हाँ राजन्, ज़्यादा ज़रूरी यह है कि टापू पर घिरे पड़े डाकुओं को वापस लाया जाये" समीर ने कहा ।

"क्या यह ठीक होगा? उन्हें वहीं क्यों न पड़ा रहने दिया जाये?" राजा समीर से पुष्टि चाहता था ।

"राजन्, ऐसा करें तो वे वहाँ पर खत्म हो जायेंगे ।" समीर ने कहा ।

"लेकिन उन्हें तो मरना ही चाहिए, चाहे हम उन्हें बचा भी लायें । उन्होंने कई लोगों का खून किया है, कई घरों को उजाड़ा है । ऐसे दुष्टों का सही दंड मौत ही हो सकता है । लेकिन हां, पहले हमें उन्हें अपने कब्ज़े में ले लेना चाहिए । फिर कानून अपनी कार्रवाई करेगा ।" राजा समीर की बात पर विचार करके बोला । फिर उसने अपने एक अंगरक्षक को कुछ हिदायतें दीं । उसकी राजधानी वहाँ से ज़्यादा दूर नहीं थी । घोड़ा सरपट दौड़े तो एक ही घंटे में अंगरक्षक वहां पहुंच सकता था ।

दोपहर तक दो बड़ी नावें पचास सैनिकों से लदी हुई नदी संगम पर पहुंच गयीं । समीर और उसके मित्रों ने सैनिकों को टापू पर पहुंचाने का ज़िम्मा लिया । जो संपत्ति उनके हाथ लगी थी, उसे पहले ही पास के किले तक पहुंचा दिया गया था । इसलिए वे सब बालक राजा के आदेश पर सेनापति के साथ, जिस डाकुओं की संपत्ति के साथ तट पर आये थे उसी नाव में फिर सवार हो गये और सैनिकों से लदी दो नावों को राह दिखाते हुए आगे बढ़ने लगे ।

उन्होंने रात के पहले पहर में अपनी यात्रा शुरू की थी । जिस समय वे उस नन्हें से टापू पर पहुंचे, उस समय पौ फट चुकी थी और बहुत ही सुंदर लग रही थी । समीर नाव-चालकों को समझा रहा था कि उन्हें लंगर कहां डालना चाहिए । चट्टानें अब भी

कुछ फासले पर थीं ।

अचानक एक पत्थर उड़ता हुआ आया और सेनापति की बगल में जोर से आ गिरा । सेनापति बाल-बाल बचा । वह समीर की बगल में खड़ा था ।

"तो इन धूर्तों ने फैसला किया है कि ये हमसे मुकाबला करेंगे ।" सेनापति समीर की ओर देखकर बोला ।

सेनापति ने पूरे ज़ोर से, अपनी प्रभावशाली आवाज़ में उन्हें ललकारा, "ज़रा ध्यान से सुनो, तुम डाकू लोगो! तुम बचकर कहीं भाग नहीं सकते । तुम केवल पांच हो और हम पचास से ऊपर हैं—इस तरह पत्थर फेंककर ज़्यादा देर लड़ नहीं पाओगे । आत्म-समपर्ण कर दो । तुम्हारे लिए यही रास्ता बचा है । जैसे मैं कहता हूँ, अगर तुम वैसे ही करोगे तो तुम्हारी सज़ा कम हो जायेगी, वरना तुम्हारी मौत तो निश्चित है ही, चाहे वह यहाँ आये या राजधानी लौटने पर ।"

लेकिन टापू से पत्थरों की बौछार होने लगी थी, और वह बढ़ती ही जा रही थी । इसका यह मतलब हुआ कि सेनापति की चेतावनी का उन डाकुओं पर कोई असर नहीं हुआ और वे सिपाहियों से लड़ने पर आमादा हैं, यह साफ जाहिर था ।

"चला दो तीर!" सेनापति ने आदेश दिया ।

फौरन पचास तीर 'सर' 'सर' की आवाज के साथ टापू की उसी दिशा में उड़ चले जिधर से पत्थर उड़कर आ रहे थे ।

अब पत्थरों का आना बंद हो गया था । एक साथ पचास तीरों को टापू में सरसराकर

आते हुए देखकर चोरों के कलेजे धकधक करने लगे । वे पत्थरों से तीरों का सामना कैसे कर पाते? डाकुओं ने इसी लाचारी में पत्थर बरसाना छोड़ दिया था । इस लिए बिना प्रतिरोध के नावें आसानी से तट से जा लगीं ।

सेनापति ने समीर से कहा, "तुम नाव पर रुक जाओ । मैं नहीं चाहता कि तुम्हारी और तुम्हारे साथियों की जान इन दुष्टों के हाथों खतरे में पड़े । मेरे अपने आदमी ही इनका मुकाबला करेंगे ।"

सेनापति की बात मानकर समीर और दूसरे बालक वहीं ठहर गये थे । सेनापति अपने सिपाहियों के साथ आगे बढ़ा । उस ने ऊंची आवाज़ में डाकुओं को चेतावनी दी कि वे फौरन अपने आप गिरफ्तार हो जाएं । लेकिन आत्मसमर्पण के लिए डाकू आगे नहीं आये । उनका कहीं पता नहीं लग रहा था ।

सेनपति ने एक बार फिर उन्हें समर्पण करने को कहा । लेकिन दूसरी तरफ से कोई उत्तर नहीं आया । परिणाम स्वरूप सैनिकों ने चट्टानों पर चढ़ना शुरू कर दिया । पर डाकुओं का तो कहीं पता ही न चल रहा था ।

"वे किसी कंदरा में छिप गये होंगे ।" सेनापति ने सैनिकों से कहा ।

सेनापति ने अपने दस सैनिकों को चट्टानों पर चौकसी के लिए खड़ा किया । बाकी चालीस को उसने पांच-पांच की टोलियों में बांटा और उन्हें आदेश दिया कि वे हर कंदरा में खोज करें ।

समीर और उसके साथी नाव में ही थे । वे खड़े-खड़े बड़ी उत्सुकता से उस अभियान का संचालन देख रहे थे । उन्हें कुछ चिंता भी हो रही थी ।

"समीर!" अचानक एक आवाज सुनाई पड़ी ।

समीर ने पहचाना । यह तो वही चिर परिचित आवाज़ है जिससे वह बंधा हुआ है । उसने उसी दिशा में देखा जिधर से वह आवाज़ आयी थी । एक छोटी-सी चट्टान पर अपूर्व खड़ा था ।

"डाकू यहाँ नहीं हैं । वे टापू के पूर्वी छोर वाली सुरंग में छिपे हुए हैं । सेनापति से कहो कि अपना समय बरबाद न करे । उसी सुरंग को खोजे," अपूर्व ने सलाह दी ।

समीर एकदम खुशी से भरा, टापू पर कूदे

गया और सेनापति के पास जा पहुंचा ।

"मेरे बच्चे, मैंने तुम्हें कहा नहीं था कि तुम नाव में ही रहो ?" सेनापति ने स्नेह से कहा ।

"अपने कहा तो था, हुजूर, लेकिन मैं आपको एक बहुत ही कीमती भेद बताने आया हूं । डाकू इस टापू के पूर्वी भाग वाली सुरंग में छिपे हुए हैं । जल्दी कीजिए ।" समीर बोला ।

"तुम्हें कैसे पता चला?" सेनापति ने आश्चर्य से पूछा ।

"उसी तरह जैसे हमें वह खज़ाना मिला और फिर जैसे हम यहाँ से बच निकले ।" समीर ने उत्तर दिया ।

सेनापति को लगा कि समीर यों ही ऊट-पटांग नहीं कह रहा है । वह अपने सैनिकों की दो टोलियों के साथ समीर द्वारा बतायी सुरंग की ओर बढ़ा । वहां पहुंचकर वह फिर दहाड़ा, "डाकुओ, हमने तुम्हें ढूंढ़ निकाला है । अब तुम समर्पण करोगे या मरना पसंद करोगे?"

"जो कोई भी सुरंग में आयेगा, उसका खात्मा हुआ समझो," डाकुओं का सरदार भी उतनी ही ज़ोर से दहाड़ा ।

लेकिन ग़ज़ब! कंदरा में ही उन्हें एक ऐसी आवाज़ सुनाई दी जिससे वे दहल गये, "अगर तुम यहां एक मिनट भी और रुको तो अपना अंत हुआ समझो । बहुत बुरी मौत मरोगे । इस कंदरा में बहुत ज़हरीले नाग हैं । ऐसे नाग कभी किसी ने देखे न होंगे ।"

पर नागों के नाम पर डाकू इतना नहीं घबराये जितना उस आवाज़ को सुनकर । किसकी आवाज़ थी यह? कोई इंसान यहाँ कैसे पहुंच सकता है? ज़रूर यह कोई प्रेत होगा ।

सुरंग अँधियारी थी ही, अब और भी अँधियारी लगने लगी ।

"चलो, समर्पण कर दें ।" डाकुओं का सरदार कह रहा था ।

एक-एक करके डाकू बाहर आये । उनके हाथ ऊपर उठे हुए थे, और वे धीरे-धीरे आगे बढ़ते आ रहे थे । सैनिकों ने उनके हाथ बांध दिये । (जारी)

उषा का सवाल

अपनी धुन के पक्के राजा विक्रम पेड़ के पास गये, पेड़ की शाखा से लटकती लाश को उतारा और उसे अपने कंधे पर लादकर, चुप्पी साधे, श्मशान की ओर चल पड़े। जैसे ही उन्होंने श्मशान की ओर कदम बढ़ाया, वैसे ही लाश में मौजूद बैताल बोलने लगा, "राजन् आधी रात के समय आप जो इस भयावह श्मशान में इस तरह घूम रहे हैं और हर बार मात खाकर भी अपनी मंज़िल तक पहुंचने के लिए जी-तोड़ मेहनत कर रहे हैं, वह तारीफ के क़ाबिल है। पर कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनके सामने बिना मेहनत किये अपने आप सब कुछ आ जाता है। पर उनमें अच्छे-बुरे, उचित-अनुचित में पहचान करने की क्षमता नहीं होती, इसलिए वे हाथ में आया सब कुछ खो देते हैं। मैं आपको एक लकड़हारे की बेटी, उषा, की कहानी सुनाना चाहता हूं। इससे आप खबरदार भी हो जायेंगे और आपका ध्यान भी बंटा रहेगा और

बैताल कथा

आपको रास्ते का कष्ट भी महसूस नहीं होगा । आप यह कहानी पूरे मनोयोग से सुनें ।" और यह कहकर बैताल ने वह कहानी सुनानी शुरू कर दी ।

पहाड़गंज नाम के गांव के आस-पास फैले जंगल में एक झोंपड़ी थी । उस झोंपड़ी में एक लकड़हारा अपनी बेटी के साथ रहता था । बेटी का नाम उषा था । उषा ने बचपन में ही अपनी मां को खो दिया था । इसलिए घर की सार-संभाल उसे ही करनी पड़ती थी ।

उषा की नानी भी थी । वह उस जंगल से लगे एक दूसरे जंगल के छोर पर रहती थी । पति के चल बसने के बाद भी वह वहीं अकेली रहती थी ।

एक दिन खाना खाते समय लकड़हारे ने अपनी बेटी से कहा, "उषा बेटी, एक बार अपनी नानी को क्यों नहीं देख आती ? बहुत दिन हो गये हैं तुम्हें उसे देखे ।"

"ठीक है, बाबा, मैं देख आऊंगी । लेकिन मेरे चले जाने के बाद तुम्हारी तथा इस घर की देख-रेख कौन करेगा? तुम्हें अकेले बेहद तकलीफ होगी, जो मुझसे बरदाश्त नहीं होगी ।" उषा ने उत्तर दिया ।

"अरी, छोड़ो मेरी चिंता । मेरा क्या है, किसी तरह चला ही लूंगा । तुम उसके पास हो आओ । इससे उसे बहुत खुशी होगी और दूसरे, तुम्हारा मन भी बहल जायेगा ।" लकड़हारे ने अपना सुझाव दिया ।

उषा अपने बाप की बात मान गयी । दूसरे दिन वह चलने को तैयार हो गयी । लेकिन जैसे ही वह तैयार हुई, वैसे ही उसके तमाम पालतू पक्षी भी उसके साथ चलने को तैयार हो गये । उषा ने सिवाय अपनी मैना के और किसी को साथ नहीं लिया । जब उषा अपनी नानी के यहां पहुंची तो सूरज डूब रहा था । उसने पीछे मुड़कर देखा । उसकी नज़र बचाकर कठफोड़वा और बया भी उसके पीछे चले आये थे । उस वक्त बूढ़ी नानी आग पर जौ की रोटियां सेंक रही थी ।

सबसे पहले मैना ही बुढ़िया की झोंपड़ी में घुसी और पानी के घड़े पर बैठकर उससे बोली, "तुम्हारे मेहमान आये हैं । चार रोटियां फालतू सेंक लो, नानी ।"

बुढ़िया ने पलटकर देखा । उसकी नज़र मैना पर पड़ी । वह समझ गयी कि उसकी

नातिन उषा आयी है । वह एकदम से उसकी अगुआनी के लिए उठी और उसे लिवाकर लाते हुए बोली, "आओ, आओ, मेरी प्यारी उषा रानी । कहो, कैसी हो? इतने दिनों बाद इस बुढ़िया की याद कैसे आयी?" फिर वह अपनी नातिन को झोंपड़ी के भीतर ले आयी ।

"क्या करूं, नानी मां । वहां से चली आती हूं तो मन में बराबर यही लगा रहता है कि बाबा की देखभाल कौन करेगा ? उसे कष्ट होगा ।" उषा ने उत्तर दिया

"तुम ठीक कहती हो । पर तुम्हारे बाबा कैसे हैं ? तुम्हारी शादी की भी उन्हें चिंता है या सब कुछ मुझ पर ही छोड़ रखा है ?" बुढ़िया ने हंसते हुए कहा ।

"तुम्हीं पर छोड़ रखा है ताकि तुम जंगल के किसी बंदर या भालू को मेरा हाथ थमा दो ।" उषा ने हंसते हुए मज़ाक में कहा ।

झोंपड़ी के भीतरी हिस्से में तीन पुरानी खाटें बिछी पड़ी थीं । उन्हें हैरानी से देखते हुए उषा ने पूछा, "तुमने इन्हें क्यों निकाला, नानी मां ? ये नाना जी के समय की हैं न ?"

"इसका उत्तर बाद में दूंगी । पहले तुम अपना मुंह-हाथ धोकर खाना खा लो ।" बुढ़िया बोली ।

उषा हाथ-मुंह धोकर नानी के पास खाना खाने बैठ गयी । नानी ने उसे खाना परोसा और साथ-साथ कहानी भी सुनाने लगी :

उस देश के राजा राजसिंह की पत्नी ने एक साथ तीन बेटों को जन्म दिया और इसके साथ ही वह चल बसी । राजा ने उन तीन बेटों को

जय, अजय और विजय नाम दिया । उन तीनों ने हर तरह की विद्या प्राप्त की और फिर वे सिंहासन पर बैठने के योग्य हो गये । इधर राजा अब अस्वस्थ रहने लगा था और चाहता था कि उसके तीनों बेटों में से कोई एक राज्य की बाग-डोर संभाल ले । लेकिन इन तीनों बेटों में से कोई भी तुरंत सिंहासन पर बैठना नहीं चाहता था ।

आखिर, राजा ने ही निर्णय लिया । उसने कहा कि तीनों राजकुमारों में से जो पहले शादी करेगा, उसी को राज-सिंहासन पर बिठा दिया जायेगा । पर इसका भी कोई असर न हुआ । राजकुमार शादी वाली बात यह कहकर टालते रहे कि कोई भी लड़की उन्हें पसंद नहीं है । लगभग सभी राज्यों की

फरमाते हैं । उन्हें खिलाते-खिलाते ही तुम इतनी दुबली हो गयी हो ।"

"ऐसी बात नहीं, मेरी प्यारी बेटी । खाने की चीज़ें तो वे खुद ही ले आते हैं । मैं तो सिर्फ परोस देती हूं । दरअसल, जब से उन्होंने यहां आना शुरू किया है, मुझे खाना बनाने की ज़रूरत ही नहीं पड़ी ।" बुढ़िया ने कहा ।

"अच्छा, अगर कहानी अभी खत्म नहीं हुई हो तो बाकी कहानी मैं कल सुनूंगी । अब मैं सोना चाहती हूं । काफी थक गयी हूं," उषा ने स्थिति को मोड़ देते हुए कहा ।

उषा एक खाट पर जा लेटी । लेकिन उसकी मुश्किल से अभी आंख लगी ही थी कि वह परेशान-सी उठ बैठी । खाट में बेशुमार खटमल थे और काट-काट कर उसे बेहाल किये दे रहे थे । उषा रात भर परेशान रही । नींद आना उसके लिए दुश्वार हो गया ।

सुबह हुई तो वह अपनी नानी से पूछने से रह न सकी, "नानी मां, वे जो इन खाटों पर आराम करते हैं, वे वाकई राजकुमार हैं या कोई पत्थर के बुत हैं ? इन खाटों में तो इतने खटमल हैं । उन्हें नींद कैसे आती होगी ?"

"शायद राज-पाट का दायित्व संभालना उन्हें ज्यादा मुश्किल लगता है और खटमलों-भरी इन खाटों पर सोना ज्यादा आसान," बुढ़िया ने हंसते हुए उत्तर दिया ।

मैना ने सुना कि उषा को रात भर खटमलों के कारण नींद नहीं आयी । उसने कठफोड़वा को बुलाया और उसे खटमलों को खत्म करने का काम सौंपा । फिर उसने बये को बुलाया

राजकुमारियों को वे ठुकरा चुके थे ।

अब राजा ने एक और उपाय सोचा । बोला, "तुम अपनी पसंद की कोई भी लड़की ढूंढ लो । बस, जो पहले शादी करेगा, उसी को राज-सिंहासन सौंप दिया जायेगा"

राजकुमार रोज अपनी पसंद की लड़की ढूंढने बाहर निकलते, और इसी बहाने जंगल में एक बुढ़िया की झोंपड़ी पर जा पहुंचते । वहां वे शतरंज खेलते, सोकर आराम करते और अंधेरा उतरते-उतरते राजाधानी को लौट आते ।

उषा ने जब उन तीन राजकुमारों की बात सुनी तो अपनी नानी से बोली, "अब समझी । तुम्हीं वह बुढ़िया हो । तुम्हारी झोंपड़ी में ही वे शतरंज खेलते हैं और आराम

और उससे कहा कि वह इन खाटों के लिए घास के गद्दे तैयार करे।

तीन-चार घंटों में ही कठफोड़वा और बये ने अपना-अपना काम पूरा कर लिया। उधर उषा ने झोंपड़ी की पूरी तरह सफाई कर डाली। कहीं भी एक जाला तक नहीं छोड़ा। फिर वह बाहर बगिया से फूल ले आयी और जहां राजकुमार आकर आराम करते थे उस हिस्से को पूरी तरह सजा दिया। झोंपड़ी अब एकदम चमक उठी थी। उसकी काया-पलट हो चुकी थी।

दोपहर हुई और वे तीनों राजकुमार अपने-अपने घोड़ों पर वहां आ पहुंचे।

उन्हें देखते ही मैना उषा से बोली, "जाओ, पिछले हिस्से में चली जाओ। पुरुष आये हैं, पुरुष।" झोंपड़ी में दाखिल होते ही राजकुमारों ने वहाँ आये बदलाव को देखा और आश्चर्य से बोले, "अरे यह अद्‌भुत काम किसने किया?"

"मेरी नातिन उषा ने।" बुढ़िया ने उत्तर दिया, "वह कल ही यहां आयी है।"

"जिस नातिन ने इस झोंपड़ी को स्वर्ग-समान सुंदर बना दिया है, हम उसे ज़रूर देखना चाहेंगे," जय कह उठा। उसे वहां की यह नयी साज-सज्जा बहुत पसंद आयी थी।

"इतनी उतावली मत दिखाओ, युवराज़। हमारी उषा को केवल भाग्यवान् ही देख पाते हैं।" मैना ने एकदम उत्तर दिया।

मैना की बात सुनकर तीनों राजकुमार हंस पड़े। उन्हें उसका यों बोलना बहुत अच्छा लगा। जो-जो खाने की वस्तुएं राजकुमार
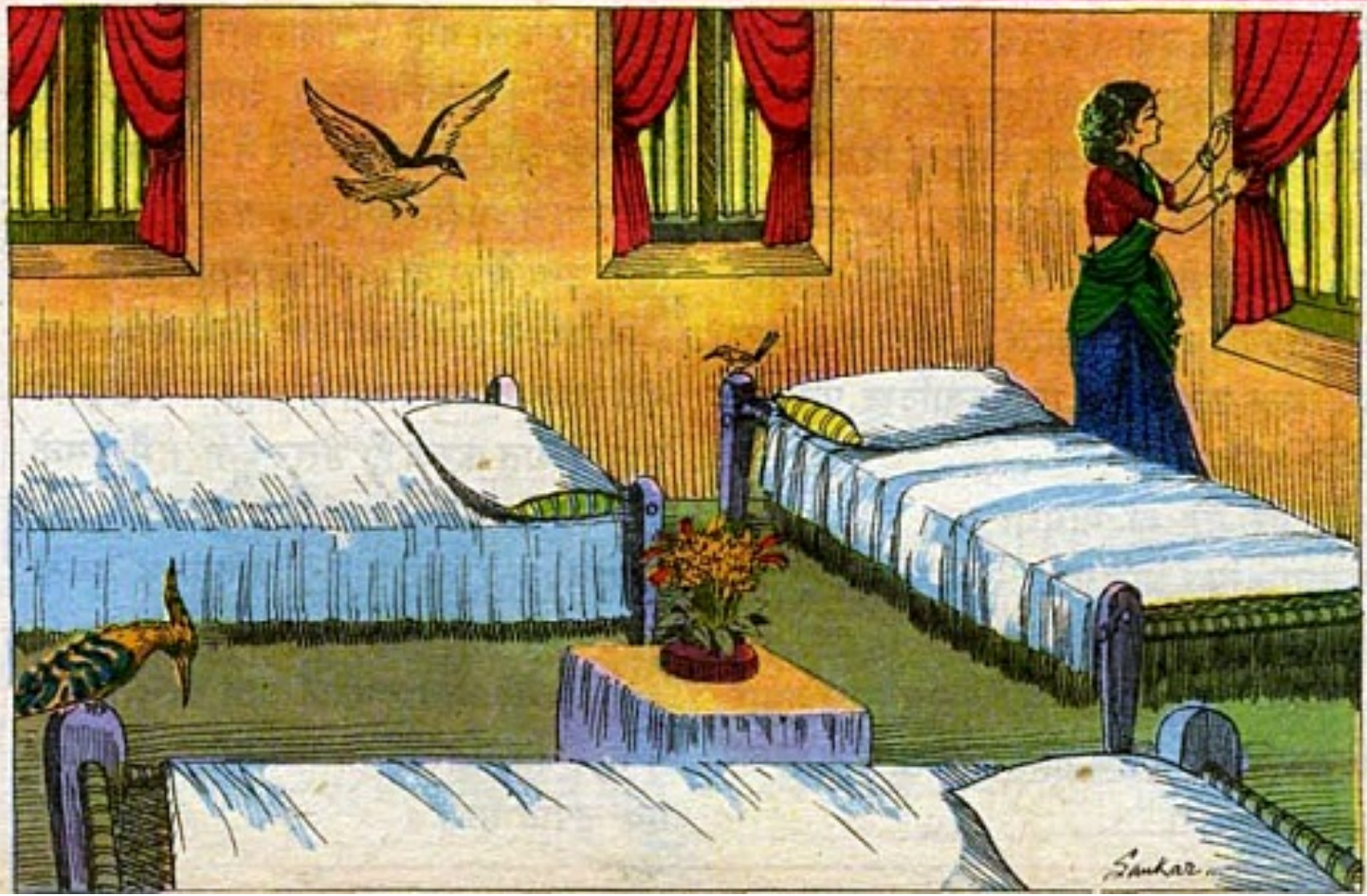
अपने साथ लाये थे, उन्हें बुढ़िया ने उषा को सौंप दिया । उषा ने वे सब तो अपने पास रख लीं और राजकुमारों के लिए मड़ुआ के आटे से बना गरीबों का पकवान भिजवा दिया ।

राजकुमारों ने कभी मड़ुआ का पकवान नहीं खाया था । इसलिए उन्हें वह पकवान बहुत पसंद आया । बोले, "वाह! क्या बात है! आज तक हमने ऐसा स्वादिष्ट पकवान कभी नहीं खाया ।"

"अरे यह हो मामूली बात है ।" मैना एकाएक फिर बोल पड़ी," हमारी उष तो ऐसे पकवान अक्सर बनाती है ।"

"तो यह बात है ।" अब राजकुमार विजय बोला, "तब तो हम तुम्हारी उषा को जरूर देखेंगे ।"

"हमारी उषा को आप हर समय नहीं देख सकते । उसके लिए निश्चित समय है ।" मैना ने उत्तर दिया ।

मैना की बात सुनकर तीनों राजकुमार फिर हंस दिये । उनके लिए आज का यह अनुभव बहुत बढ़िया रहा । शाम को वे अपने महल को लौट गये ।

दूसरे दिन दोपहर के समय वे फिर आये । उस समय उषा बाहर बगिया में फूल चुन रही थी, साथ में कोई गीत भी गुनगुना रही थी ।

उसके असाधारण सौंदर्य पर राजकुमार चकित रह गये । उसके गीत ने भी उन पर जादू का असर किया । "ओह । कितना मधुर स्वर है ।" तीनों राजकुमार एकसाथ कह उठे ।

राजकुमारों को आया देखकर उषा झोंपड़ी के भीतर चली गयी । राजकुमारों से अब रहा नहीं गया । उन्होंने अलग-अलग बुढ़िया से बात की और हर राजकुमार ने यही कहा कि वह उषा से शादी करना चाहता है । इस तरह तीनों उषा से शादी करने को तैयार हो गये ।

बुढ़िया ने उस समय उन्हें कोई आश्वासन नहीं दिया, केवल इतना ही कहा, "ठीक है, मैं उषा से बात करके ही उत्तर दूंगी । मैं उसके मन को भी जानना चाहती हूं ।"

राजकुमार लौट गये । बुढ़िया ने अपनी नातिन को सारी बात बता दी ।

नानी की बात सुनकर उषा सोच में पड़ गयी । वह रात भर सोचती रही । फिर उसे एक उपाय सूझा ।

दूसरे दिन उसने नानी से कहा, "नानी मां, मैं तीनों राजकुमारों से एक सवाल करूंगी। जो मुझे मेरी उम्मीद के मुताबिक जवाब देगा, मैं उसी से शादी करूंगी।"

दोपहर को जब राजकुमार आये तो बुढ़िया उनसे बोली, "उषा तुम तीनों से एक सवाल करना चाहती है। अब तुम अलग-अलग उससे बात करो। जिसका उत्तर उसे ठीक लगेगा, उसी से वह शादी करेगी।"

पहले जय उससे मिला। उषा ने प्रश्न किया, "अगर आपके पिता हमारी शादी के लिए राज़ी नहीं हुए तो आप क्या करेंगे?"

"ऐसे संदेह मन में मत आने दो। मेरी बात पर विश्वास करो। यदि पिताजी राज़ी न भी हुए तो मुझे अपने पर पूरा भरोसा है। मैं किसी-न-किसी तरह उन्हें राज़ी कर ही लूंगा।" जय का उत्तर था।

अब बारी विजय की थी। उषा ने उससे भी वही सवाल किया।

विजय का उत्तर था, "पिताजी नहीं चाहेंगे तो यह शादी नहीं हो पायेगी।"

विजय के बाद अजय आया। तब भी उषा ने वही सवाल किया।

अजय बोला, "अगर पिताजी इस शादी के लिए राज़ी नहीं हुए तो कोई परवाह नहीं। हमारी शादी होकर ही रहेगी। मैं तुम्हारी खातिर सब कुछ छोड़ने को तैयार हूं। मुझे यह राज-पाट, धन-दौलत, कुछ नहीं चाहिए। तुम मुझ पर भरोसा रखो। मैं केवल तुम्हारे लिए हूं।" अजय काफी उत्तेजना में था।

उषा अपने कक्ष से बाहर आयी और उसने वरमाला जय के गले में डाल दी। तीनों राजकुमारों में से उसने जय को ही चुना था।

बैताल अपनी कहानी सुना चुका था। अब वह राजा विक्रम से बोला, "राजन्, उषा ने जिस तरह अपने पति को चुना, क्या वह अजीब नहीं लगता? तीनों राजकुमारों में से विजय ने जो उत्तर दिया, उससे क्या यह स्पष्ट नहीं होता कि वह एक आज्ञाकारी बेटा है और उसका पिता अपने बेटे की बात कभी ठुकरा नहीं सकता? इस बेटे में अपने बड़ों के प्रति असीम भक्ति-भाव था। राजसी परिवारों में ऐसा गुण बहुत कम ही देखने को मिलता है। इस पर भी उषा ने विजय को ठुकरा दिया। कितना विचित्र लगता है यह।

अब अजय को लें। वह उषा के लिए सब कुछ त्यागने को तैयार था। उसने राजपाट, धन-दौलत, सबको एक तरफ कर दिया। उषा के प्रति उसके मन में प्रगाढ़ स्नेह था। कैसे कोई युवती इतने स्नेहिल युवक को ठुकरा सकती है? ताज्जुब होता है। और उसने चुना किसे? जय को। उसी के गले में उसने वरमाला डाली। क्या यह अदूरदर्शितापूर्ण और अनुचित नहीं लगता? आप इन शंकाओं का समाधान करें। इनका समाधान जानते हुए भी यदि आप नहीं बोलेंगे तो आपका सर फट जायेगा।"

राजा विक्रम को आखिर बोलना ही पड़ा। उन्होंने कहा, "उषा एक साधारण लकड़हारे की बेटी थी। उसे राज-घराने का कोई सेवक भी अगर पति के रूप में मिल जाता तो वह अपने को धन्य मानती। यह तो उसका परम सौभाग्य था कि उसके सामने एक साथ तीन-तीन राजकुमारों ने शादी का प्रस्ताव रखा और उनमें आपस में होड़ लग गयी। ऐसी हालत में कोई भी बुद्धिमान युवती यही सोचती कि उसे ऐसा वर मिले जो राजकार्य चलाने की क्षमता रखता हो, जो विवेकवान हो, जो किसी बहक में न आये। विजय ने उससे यह कहा कि वह अपने पिता की बात टाल नहीं सकता। यानी वह अपना अलग व्यक्तित्व नहीं रखता। अजय इतने बहकाव में था कि वह उषा के लिए सब कुछ छोड़ने को तैयार था। इससे तो उसकी उच्छृंखलता ही प्रकट होती है। वह बिलकुल दायित्वहीन लगता है। केवल जय ने ही यह विश्वास प्रकट किया कि वह अपने पिता को समझा सकेगा, उन्हें मना लेगा। यह तो बहुत बड़ा गुण है कि कोई किसी का दिल भी न दुखाये और अपनी बात मनवा ले। इसलिए उषा के चुनाव में वाकई बड़ी समझदारी थी।"

बेताल इस उत्तर से संतुष्ट हो गया। पर साथ ही राजा विक्रम का मौन भी भंग हो गया। इसलिए बैताल लाश के साथ अदृश्य हो गया और फिर उसी पेड़ की शाखा से जा लटका। (कल्पित)

(आधार : एम.आर कामेश की रचना)

चन्दामामा परिशिष्ट-३७

हमारे देवगण :

महावीर

पुराने जमाने से हमारे देश में जैन धर्म के अनुयायी रहते आ रहे हैं । जैन धर्म के उसूलों को अधिक प्रचार वर्धमान महावीर जिन द्वारा मिला ।

वर्धमान ई.पू. छठी शताब्दी में वैशाली के राज परिवार में पैदा हुआ था । अपने तीस वर्ष की उम्र में कदम रखते ही उन्होंने दुनियादारी सुखों का त्याग किया, इसके पूर्व तेईस तीर्थंकरों द्वारा प्रबोधित आध्यात्मिक मार्ग का अनुसरण किया । जैन धर्म को और ज्यादा प्रचार देकर, उस के उसूलों को और प्रसिद्ध बनाकर वर्धमान महावीर चौबीसवां तीर्थंकर बन गया था ।

मानव जीवन का अंतिम उद्देश निर्वाण होता है । आत्म नियंत्रण के साथ संपूर्ण अहिंसा का पालन करने पर जन्म और मृत्यु के बंधनों से मुक्तिप्रदान करने वाला निर्वाण प्राप्त होता है, यूं उन्होंने उपदेश दिया ।

जैन मंदिरों में वर्धमान महावीर की पूजा होती है । ध्यान में लीन मुद्रा में रहे उनके रूप को स्वर्णिम वर्ण में चित्रित किया जाता है । इन मंदिरों में दूसरे तीर्थंकरों की भी देव मानकर पूजा की जाती है । अतिपुरातन और नवीन जैन मंदिर हमारे देश में जगह-जगह पर हैं ।

सब से कमउम्र उपन्यासकार

अगर इस बार क्रिस्मस के दिनों में तुम्हें किसी किताबों की दुकान पर जाने का इत्तफाक हो तो एक किताब का ज़रूर पता लगाना । उसका नाम है—द डायरी ऑव ए सेवंथ ग्रेडर । इसकी रचना उस बालिका ने की है जो दो साल पहले स्वयं सातवीं कक्षा में थी । उसने इसे गर्मियों की छुट्टियों के दौरान लिख था । फिर उसके पिता ने उसे टाइप किया और अब यह एक प्रकाशक के पास है । प्रकाशक ने इसे इसी क्रिस्मस के दौरान पाठकों तक पहुंचाने का निश्चय किया है ।

इस तेरह-वर्षीय लेखिका का नाम है नयनतारा नूरानी । वह इस समय कराची के पी. ई. सी. हाई स्कूल की नवीं कक्षा में है । जहां कहीं वह दिख जाती है, वहीं उससे हस्ताक्षर लेने वालों का जमघट लग जाता है । पाकिस्तान में इस समय वह सबसे कम उम्र उपन्यासकार है । जिस समय उसने अपना यह पहला उपन्यास लिखा, उस समय उसकी उम्र केवल ११ वर्ष थी । इसके प्रकशन के समय वह १२ वें वर्ष में दाखिल हो चुकी थी ।

कराची के एक सुविख्यात प्रकाशन-गृह ने उसकी मां से बच्चों के लिए एक उपन्यास लिखने के लिए अनुरोध किया । मां अंगरेज़ी पढ़ाती है और लेखिका भी है । नयनतारा ने सुना कि उसकी मां क्षमा-याचना के साथ प्रकाशक को मना कर रही है । उसका कहना था कि उसके पास समय नहीं है । बेटी ने घर में किसी से इस बारे में बात नहीं की और कागज़ का एक पन्ना लेकर उस पर लिखने बैठ गयी । यह कहानी बहुत दिनों से उसके मन में थी ।

नयनतारा ने अपनी अधूरी पाण्डुलिपि चुपके से प्रकाशक को भिजवा दी । दूसरे दिन ही टैलीफोन की घंटी बजी । उधर प्रकाशक की १०-वर्षीय बेटी बोल रही थी । वह पूछ रही थी कि उसे बाकी की कहानी कब पढ़ने को मिलेगी? नयन-तारा अब जमकर बैठ गयी और उसने कुछ ही दिनों में वह कहानी पूरी कर डाली । उस उपन्यास का नाम था—ए ड्रीम कम ट्रू (सपना सच हुआ) । इसमें एक नन्ही बालिका की कहानी है जा अपनी सौतेली मां से पीछा छुड़ाकर घर से भाग जाती है और एक सर्कस में शामिल हो जाती है । इत्तफ़ाक कि वहां उसे अपनी असली मां मिल जाती है । जैसे ही इस पुस्तक का प्रकाशन हुआ, वैसे ही पाठकों ने उसे हाथों हाथ ले लिया ।

नयनतारा अपनी कक्षा में अव्वल रहती है । उसके प्रिय विषय हैं भौतिकी तथा गणित । लेकिन लिखने का शौक पूरा करने के लिए भी वह थोड़ा-बहुत समय निकाल ही लेती है । उसकी एक १६-वर्षीय बहन है । नये-नये विचार उसी से आते हैं । उधर १०-वर्षीय एक छोटा भाई है जो उसके प्रूफ पढ़ देता है । और पिता—वह टाइप करने की ज़िम्मेदारी लिये रहते हैं । पेशे से वह पत्रकार हैं । इसलिए टाइप करते-करते वह पाण्डुलिपि में संशोधन करने की छूट भी ले लेते हैं । लेकिन बाप और बेटी के बीच इन को लेकर कभी-कभी तकरार भी हो जाती है ।

क्या तुम जानते हो?

१. विश्व में वह कौन-सा समाचार-पत्र है जिसकी प्रसार-संख्या सबसे अधिक है?

२. पुरातन काल में रोम के लोग उल्लू को विपदा का चिह्न या प्रतीक मानते थे । मधु-मक्खियों को किस का प्रतीक माना जाता था?

३. अंगरेज़ी में सबसे लोकप्रिय गीत कौन-सा है?

४. एक गणितज्ञ का जन्म केरल में हुआ और उसकी शिक्षा तक्षशिला में । वह गणितज्ञ कौन था? वह किस लिए जाना जाता है?

५. भारत के तिरंगे के रूपांकन के लिए सुश्री भीकाजी कामा को श्रेय दिया जाता है । अमरीकी झंडे का रूपांकन भी किसी महिला ने ही किया था । उसका नाम क्या था?

६. किसके सम्मान में भारत ने किसी सोवियत प्रकरण को लेकर पहली बार एक टिकट जारी किया?

७. इंगलैंड की मलिका विक्टोरिया और रूस का पीटर महान एक बहुत बड़े आविष्कारक से मिलने गये? वह आविष्कारक कौन था? उसका आविष्कार क्या था?

८. अमरीका के ईस्थर क्लेवेलैंड को विलक्षण विशिष्टता प्राप्त है । वह क्या है?

९. एक अमरीकी राष्ट्रपति अपना राष्ट्रपति-काल पूरा होने तक अविवाहित रहे । वह राष्ट्रपति कौन थे?

१०. भूमि पर अधिकतम तापमान कितना रिकार्ड किया गया है? कब? कहां?

११. और न्यूनतम?

१२. रिकार्ड की गयी सबसे भयंकर प्राकृतिक विपदा क्या थी?

उत्तर

१. जापान से निकलने वाले योमिऊरी शिंबूम की । इसकी स्थापना १८७४ में हुई थी ।

२. सौभाग्य । मधु-मक्खियां देवताओं की दूत मानी जाती थी ।

३. हैपी बर्थ डे टू यू । इसकी रचना १९३६ में मिल्ड्रेड पैटी हिल ने की थी ।

४. आर्य भट्ट । उसने एक वृत्त की परिधि और उसके व्यास के बीच अनुपात की खोज की । इसे "पी" कहते हैं । गणित में इसे ३.१४१५९ मापा गया है ।

५. फिलाडेल्फिया की बैट्सी रॉस । वह औरतों की पोशाकें सिया करती थी ।

६. मैक्सिम गोर्की । यह टिकट १९६८ में जारी किया गया ।

७. एंटन लियूवेनहोइक, सूक्ष्मवीक्षण यंत्र ।

८. ह्वाइट हाउस में जन्म लेने वाला वह एकमात्र शिशु था । उस समय उसके पिता ग्रोवर क्लेवेलैंड राष्ट्रपति थे ।

९. जेम्स बुकानन । उनके बाद अब्राहम लिंकन आये ।

१०. ५७.८° सैंटीग्रेड । १३ सितंबर १९२२ को । स्थान उत्तरी अफ्रीका में अज़ीज़ा ।

११. —८८.३° सैंटीग्रेड । २९ अगस्त, १९६० को, दक्षिणी ध्रुव के वोस्टोकशुल्ड में ।

१२. १९३१ में चीन की हुआंग हो नदी में जो बाढ़ आयी, उसने ३७ लाख लोगों की जान ले ली ।

चंदामामा की खबरें

बहुत बड़ा परिवार

एक ही परिवार के सात सौ सदस्य और सब जिंदा हों, क्या इस बात की कल्पना की जा सकती है? लेकिन यह सब है सच । केरल के कैलीकट के समीप में कुट्टिचिरा में एक मुसलमानी परिवार है कोसानिवीडु जिसने इस मामले में एक कीर्तिमान स्थापित किया था । गिनेस बुक में भी चढ़ चुका थ । चेरिया आईशाजी इस परिवार की सब से बड़ी वृद्धा है । उसकी उम्र है ९० वर्ष । उसके बेटे, बेटियां, पोते, पोतियां, पड़पोते –सब कुल मिलकर ६८० हैं । कुछ वर्षों से ये सब १५ अगस्त के दिन एक जगह मिलकर खुशियां मनाते आ रहे हैं । फोटो खिंचवाते हैं । गण्तंत्र के ढंग में अपने परिवार के मुखिये को ये चुनते हैं । ७५ वर्ष का अहमद कोया पिछले ३३ सालों से इस परिवार का मुखिया बना रहा ।

दसवां ग्रह

तीन महीने पहले ब्रिटिश शास्त्रज्ञों ने पता लगाया था कि सौरमंडल में नौ ग्रहों के साथ एक और ग्रह भी है । यह दसवां ग्रह, जो हमारी धरती से दस गुना बड़ा है, सौरमंडल में घूम रहा है, एक मातृ-नक्षत्र के चारों ओर, वैज्ञानिकों ने कहा । सूर्य के चारों ओर धरती के घूमने में जो दायरा है उसके दो तिहाई दायरे में यह ग्रह अपने मातृ-नक्षत्र का भ्रमण कर रहा है । वैज्ञानिक कहते हैं, इस मातृ-नक्षत्र से हर तीसरे सेकन पर लगातार १४०० मेगा हेर्टज फ्रीक्वेन्सी पर रेडियो तरंग निकल आ रहे हैं जिन्हें शक्तिशाली रेडियो टेलीस्कोप से सुना जा सकता है । धनुराशि नक्षत्र मंडल के समीप दिखने वाले इस ग्रह का पीएसआर १८२९-१० नाम रखा गया था और इस ग्रह में जीवन की संभावना संदेहजनक बतायी जाती है ।

अंगूठे पर नाखुन

रामपुर में शिवराज और शांता नाम के पति-पत्नी रहते थे। उनकी कुल जायदाद एक पक्का मकान और दस एकड़ ज़मीन थी। उनका एक बेटा भी था। उसका नाम था शंकर। शंकर अकेली संतान था। वह बहुत सीधा था।

एक दिन खूब सोच-समझकर उस दंपति ने निर्णय लिया कि शंकर की शादी ऐसी बुद्धिमान लड़की से कर दी जाये जो उसके पक्ष को हमेशा मज़बूत रखे।

जब शंकर बड़ा हुआ तो उसके मां-बाप ने वाकई वैसा किया। लड़की गरीब परिवार से थी, पर बुद्धि की तेज़ थी। उसका नाम ललिता था।

ललिता बुद्धि की तेज़ ही नहीं, वैसे भी काफी तेज़ थी। उसे यह समझते देर नहीं लगी कि उसके सास, ससुर की उसके साथ अपने बेटे की शादी करने के पीछे क्या मंशा रही है। इसलिए उसने घर के काम-काज को संभाल लेने के बाद उसे ऐसे चलाया कि किसी को शंकर के सीधे होने का आभास ही नहीं होता था।

इस तरह कुछ समय बीता। इस बीच ललिता के मिज़ाज में थोड़ा अंतर आ गया था। अब वह बूढ़े सास-ससुर की सेवा-सुश्रूषा तथा उनके वक्त-बेवक्त के सलाह-मशविरे से एक तरह से ऊब चुकी थी। वह मन ही मन चाह रही थी कि पति से कहकर सास-ससुर से अलग रहने लगे ताकि वह रोज-रोज की दखलंदाज़ी दूर हो।

एक शाम पास के शिवालय में पुराण कथा चल रही थी। शांता उसे सुनने चली गयी। शिवराज और शंकर अभी खेत से नहीं लौटे थे। जैसे ही उसे पति दूर से आता दिखाई दिया, उसने अपने दायें अंगूठे पर पानी में भिगोयी हुई पट्टी बांध ली, और खाट पर

कु. गोमती

पड़कर कराहने लगी ।

शंकर जब घर में दाखिल हुआ तो उसने ललिता को कराहते देखा । उसने पूछा । "क्या हुआ, ललिता?"

"बड़ा संकट आ गया है हम पर । मेरे अंगूठे पर नाखुन उग आया है, जी!" और यह कहकर वह और ज़ोर से कराहने लगी ।

शंकर सीधा तो था ही । उसने सोचा कि यह कोई अनहोनी घटना घट गयी है । घबराहट में बोला, "अंगूठे पर नाखुन? मैं अभी वैद्य शारदाप्रसाद को बुलाकर लाता हूं!" और यह कह कर वह बाहर जाने को हुआ ।

लेकिन ललिता ने उसे रोका । बोली, "यह बला शारदाप्रसाद जैसे सौ वैद्य भी आ जायें तो नहीं रोक पायेंगे । मैंने अपनी दादी के मुंह से सुना था कि यदि ऐसा हो जाये तो फौरन अलग घर बसा लेना चाहिए ।"

शंकर परेशान हो उठा । थोड़ी देर में उसका पिता भी खेत से लौट आया । शंकर ने उन्हें एक-एक शब्द वही कह सुनाया जो उसकी पत्नी ने उससे कहा था ।

मां शांता और पिता शिवराज के मन में एकसाथ यह बात आयी कि ललिता को सबक तो सिखाया ही जाना चाहिए । मां बेटे से बोली, "बेटा, अंगूठे पर नाखुन का उग आना तो बहुत खतरनाक रोग है ।"

भीतर कमरे से ललिता ने मां-बेटे की बात सुन ली थी । उसे लगा कि उसका पति ही नहीं, उसके सास-ससुर भी उसी की तरह सीधे और भोले हैं ।

इस बीच शांता ने अपने पति को कुछ कहकर घर से बाहर भेज दिया । फिर वह अपनी बहू के पास आकर बैठ गयी ।

इतने में शिवराज गांव के एक उजड्ड वैद्य बीरू को अपने साथ लिवा लाया । बीरू के हाथ में धारदार छुरी थी । शांता भीतर कमरे से बाहर चली आयी, और उसने अपने बेटे को कुछ समझाया । भोला शंकर अपने सर को हिलाता हुआ कमरे में दाखिल हुआ और उसने अपनी पत्नी को खटिया से उठाकर बैठा दिया । फिर उसे मज़बूती से पकड़ा ।

अब कमरे में दाखिल होने वालों में बीरू था । वह अपनी छुरी को सान पर और धार दे रहा था । फिर धार देते-देते वह बोला,

"बिटिया रानी, अब जल्दी से अपना हाथ आगे कर दो । अंगूठा काटकर मुझे कहीं और भी जाना है। गांव में ऐसे चार और मरीज़ हैं । उनके भी ऐसे ही अंगूठे पर नाखुन उग आया है ।"

अब तो ललिता की हालत खराब हो गयी । वह मारे डर के कांपने लगी । उसके मुंह से कुछ निकल ही नहीं पा रहा था । पर शांता ने और होशियारी दिखायी । उसने ऐसे जताया जैसे उसे ललिता की घबराहट का कुछ पता ही न हो । वह वैद्य से बोली, "बीरू भैया, अंगूठा ज़रा सावधानी से काटना, और वही अंगूठा काटना जिस पर नाखुन उगा हो!"

शांता की बात सुनकर बीरू ठठाकर हंस पड़ा और बोला, "आप भी खूब हैं, शांता बाई! क्या मैं इतना अनाड़ी हूं कि अंगूठे की जगह पूरा हाथ ही काट डालूंगा? हां, एक बार मुझ से ऐसा हो गया था कि एक उंगली की जगह मैंने दो उंगलियां काट डाली थीं । पर वह तो केवल एक बार ही हुआ था । लोग अब ख्वाहमख्वाह मुझ से घबराते हैं । अच्छा, बिटिया रानी, ज़रा हाथ आगे बढ़ाओ ।" और यह कहकर उसने ललिता के हाथ को लेने की कोशिश की ।

अब ललिला के होश पलटे । उसे अब विश्वास हो गया कि यह उजड्ड-गंवार वैद्य ज़रूर उसका अंगूठा जड़ से उड़ा देगा । मारे डर के उसकी घिग्घी तो बंधी हुई थी, किसी तरह कंपकंपाते हुए बोली, "मां जी, मुझे बचाइए । मेरा अंगूठा बिलकुल ठीक है । मैंने तो यह केवल नाटक रचा था । मैं अपना अलग घर बसाकर रहना चाहती थी । मुझ से भूल हुई । मुझे क्षमा कीजिए । वैद्य को तुरंत लौटा दीजिए ।" और इतना करते-कहते उसकी आंखों में आंसू भी छलछला आये थे ।

शांता के ओठों पर मंद मुस्कान आ गयी । उसने बहू को छोड़ दिया । उधर बीरू वैद्य ने भी अपनी छुरी वापस खोल में रख ली ।

शंकर तो भोला था । उसकी समझ में यह सब कुछ नहीं आया । बोला, "अब उस नाखुन का क्या होगा! वह तो अंगूठे पर उगा हुआ है ।"

बीरू वैद्य भी अब हंसने से रह न सका । बोला, "शंकर बेटे, देखो, मेरे हाथों को

देखो । अपने हाथों को देखो । शांता बाई के हाथों को देखो । सब के अंगूठे पर नाखुन उगते हैं, जन्म से ही उगते हैं ।"

अब ललिता तो शरम के मारे गड़ी जा रही थी । सास ने उसकी हालत समझी और उसे सांत्वना देते हुए कहा, "बेटी, अगर तुम सचमुच अलग हो जाना चाहती हो तो हमें कोई एतराज़ नहीं । तुम्हारे ससुर जी को भी कोई एतराज़ नहीं होगा । पर इसके लिए तुम्हें कहीं और जाने की ज़रूरत नहीं । मैं और तुम्हारे ससुर जी, हम खुद ही यहां से चले जायेंगे । खेत में एक झोंपड़ी डालकर रह लेंगे ।"

अब तो ललिता की हालत और भी खराब हो गयी । वह उसी क्षण अपनी सास के पांवों पर गिर पड़ी और फूट-फूट कर रोने लगी । फिर किसी तरह बोली, "मुझे क्षमा कर दीजिए, मां जी । ऐसी भूल अब आइंदा कभी नहीं होगी । आप जब तक मुझे क्षमा नहीं करेंगी, मैं आपके पांवों पर से नहीं उठूंगी ।"

शांता ने अब अपनी बहू को उठाकर अपने गले से लगा लिया था, और उससे कह रही थी, "तुम्हें क्षमा करूंगी, ज़रूर क्षमा करूंगी, पर अभी नहीं । तब क्षमा करूंगी जब तुम मुझे एक पोता या पोती दोगी ।"

अब शिवराज भी वहीं आ गया था । उसने वैद्य को एक सिक्का दिया । वैद्य ने सिक्का हाथ में लेकर उसे खनखनाया और ललिता से बोला, "ललिता बेटी, इस बार तो तुम्हारे अंगूठे पर नाखुन उगा था । अगली बार तुम्हारी उंगली पर भी नाखुन उग सकता है । तब तुम मुझे बुलाना नहीं भूलना । मैं ज़रूर आऊंगा, और..." और यह कह कर वहां से चला गया ।

ललिता अब पूरी तरह रास्ते पर आ चुकी थी । अलग घर बसाने की बात वह अब सपने में भी अपने मन में नहीं ला सकती थी । वह अब पहले से भी ज़्यादा अपने सास-ससुर की सेवा में लग गयी थी । वह अब उस दिन के इंतज़ार में थी जब वह अपनी सास को चुपके से बता सके कि जल्दी ही वह उन्हें एक पोता या पोती देगी ।
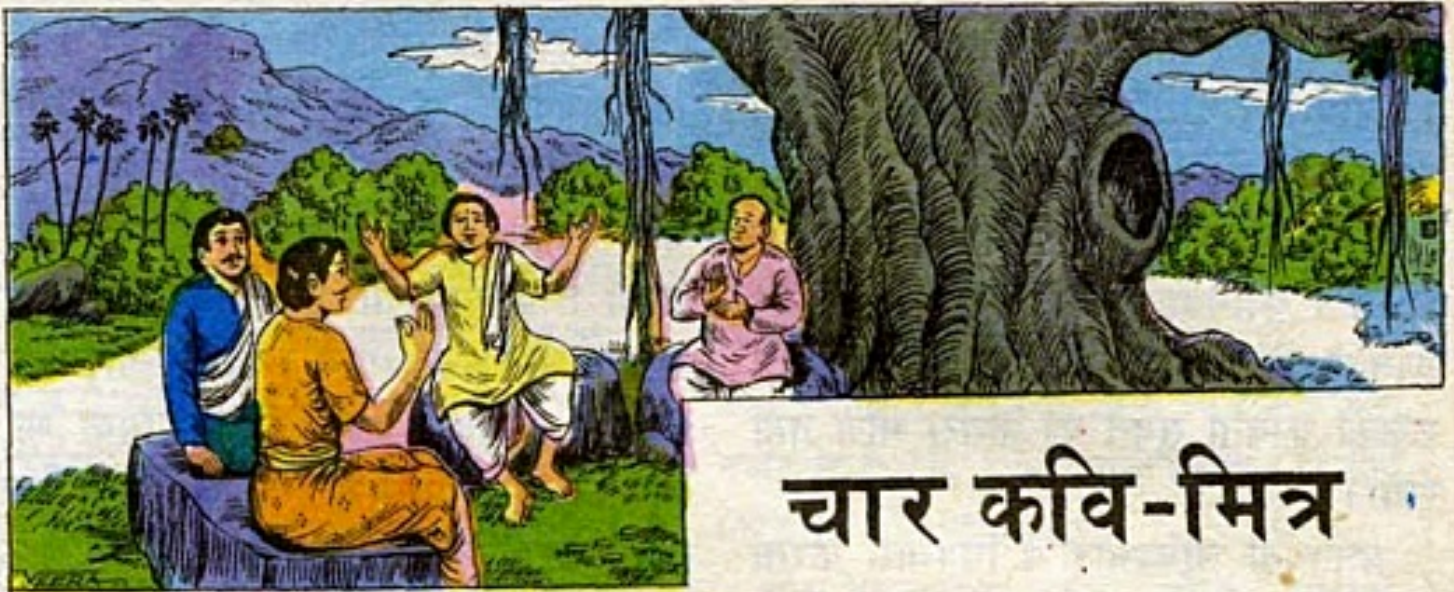
चार कवि-मित्र

एक गांव में तीन मित्र रहते थे । उनके नाम थे बहादुर, रामदेव और धनपत । तीनों अपनी-अपनी विशेषता रखते थे । बहादुर नास्तिक था । वह किसी देवी-देवता में विश्वास नहीं करता था, न ही वह किसी मंदिर में जाता था । मंदिर जाने वाले भक्तों की वह अक्सर हंसी उड़ाता । उधर रामदेव ठीक इसके विपरीत था । वह आस्तिक था, भगवान् की सत्ता को मानता था और मंदिर जाता था । रहा अब धनपत, तो उसके तो मिज़ाज ही दूसरे थे । वह अपने नाम के अनुरूप धनी ज़रूर था, पर साथ ही अव्वल दर्जे का कंजूस भी था ।

अलग-अलग स्वाभाव के होने के बावजूद ये तीनों व्यक्ति आपस में मित्र थे । हाल ही में इनका एक और मित्र बना था-अनंत । अनंत लोकाचार में विश्वास रखता था और हर किसी से बनाकर रखता था ।

चारों मित्रों की कविता में असाधारण रुचि थी । वे रोज़ शाम को गांव के छोर पर एक बरगद के पेड़ तले आ बैठते और साहित्य-चर्चा करने के साथ-साथ अपनी-अपनी कविता का पाठ भी करते, हालांकि वहां सुनने वाला और कोई नहीं होता था । लोग कहते, बहादुर नास्तिक है । अगर इत्तफाक से कभी कोई भूत-प्रेत उसे सताने पर उतर आया तो कोई देवी-देवता भी उसकी मदद करने नहीं आयेगा । हां, बहादुर के पास कविता का अस्त्र तो है, और वह बहुत कारगर है । उसकी कविता की एक पंक्ति सुनते ही प्रेत-व्रेत दूर भाग जायेंगे ।

रामदेव के बारे में वे कहते-वह परम आस्तिक है और हर वक़्त भगवान् को ही अपनी कविता से रिझाता रहता है । ऐसी कविताएँ लिख-लिखकर उसने भगवान् का जीना हराम तो कर ही रखा होग, हमने उन्हें

समीश त्रिपाठी

सुनना शुरू किया तो हमारा जीना भी हराम हो जायेगा । इसीलिए भगवान् शायद हम लोगों को उससे परे रखे हुए हों ।

धनपत के बारे में भी उतने ही तेज़ मजाक चलते । कहनेवाले कहते—बाप रे! उसकी कविता सुनें । हमें चाहे वह कर्ज़ न दे, पर हम उसकी कविता सुनने का खतरा मोल नहीं लेंगे ।

अनंत तो लोकाचार में विश्वास करता था । उसे लगता, कभी न कभी इन मित्रों की बदौलत उसे ज़रूर कोई लाभ होगा । इसलिए वह उनकी मित्रता दरकिनार नहीं कर सकता था । उसे मज़बूर होकर उनकी कविता सुननी पड़ती । फिर उसके मन में प्रतिकार की भावना जागी और उसने भी कविता कहनी शुरू कर दी ।

इत्तफ़ाक कि उस गांव का ज़मींदार अपने को कविपोषक कहलाना चाहता था । नाम भी था उसका कविराज । उसने एक कविता-प्रतियोगिता का आयोजन करा डाला । प्रतियोगियों में बहादुर, रामदेव, धनपत और अनंत भी थे । कविता-पाठ शुरू हुआ । ज़मींदार स्वयं ही निर्णायक था, हालांकि उसने पास में एक पारखी भी बैठा रखा था । उसने पांच कविताओं को श्रेष्ठ ठहराया और उनके रचियताओं को एक-एक हज़ार रुपये पुरस्कार दिया ।

पुरस्कार और सत्कार-सम्मान पाने वालों में अनंत भी था । बहादुर, रामदेव और धनपत की हालत तो खराब हो गयी । उन्हें किसी ने पूछा ही नहीं । वे मारे ईर्ष्या के जल उठे और अनंत से कटे-कटे रहने लगे ।
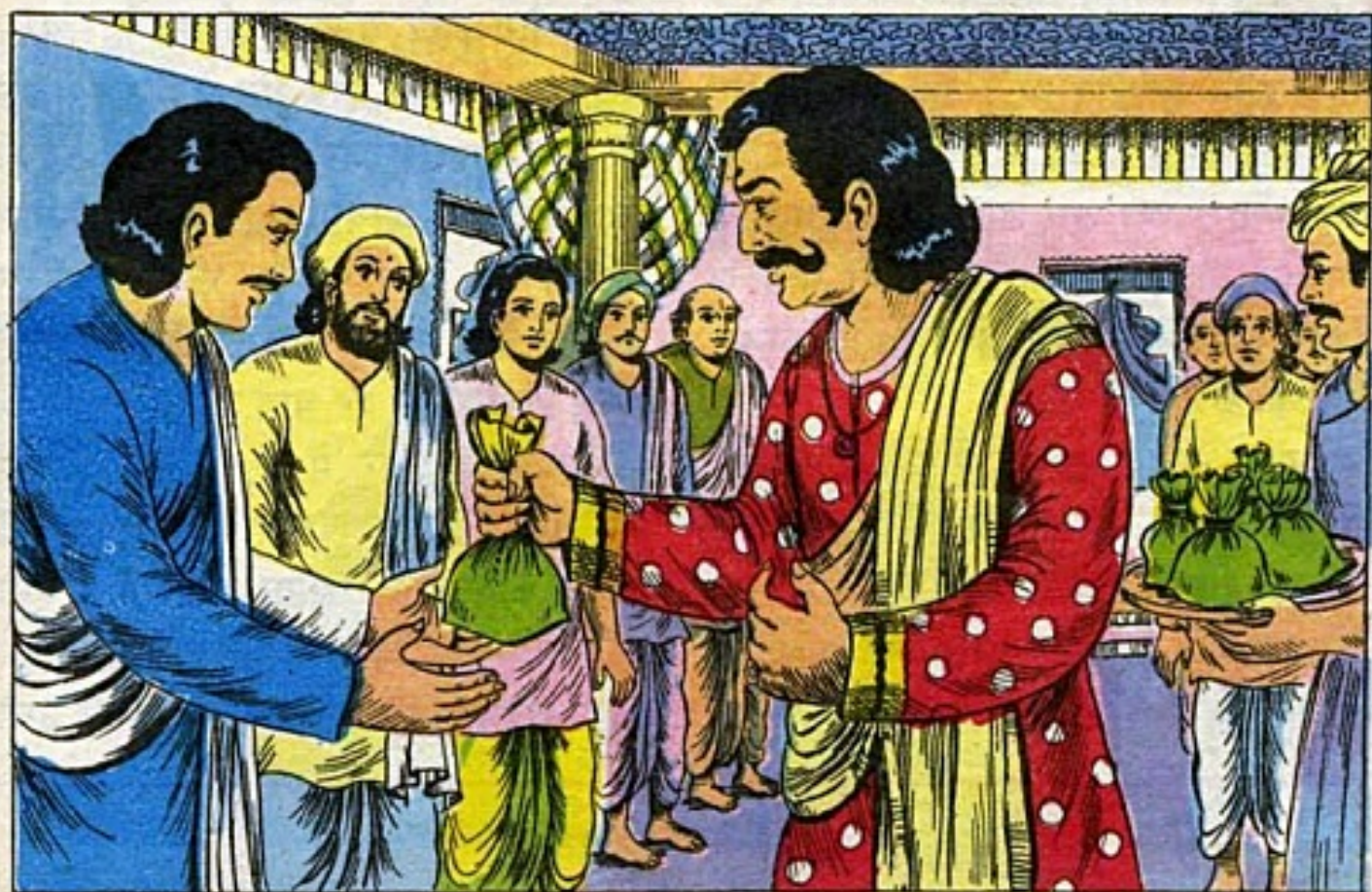
अनंत को अपने इन मित्रों का व्यवहार बड़ा विचित्र लग रहा था । वह भीतर ही भीतर बहुत दुःखी था ।

वह सबसे पहले बहादुर के पास गया और उससे बोला, "तुम अपनी नास्तिकता छोड़ो, दोस्त! भगवान् की कृपा अगर तुम पर हो तो तुम अच्छा-खासा नाम कमा पाओगे!"

इसके बाद वह सीधे रामदेव के पास गया, और उससे बोला, "यदि तुमने कविराज को भी भगवान् का स्वरूप मान लिया होता और उसका गौरव-गान किया होता तो कोई कारण नहीं था कि तुम्हें मान-सम्मान न मिलता । अपने संगी-साथियों में भगवान् को देखो । इससे तुम्हारी उन्नति तो होगी ही, तुम्हारी ख्याति भी फैलेगी!"

अंत में वह धनपत के यहां गया और उससे बोला, "तुम्हारी यह कंजूसी हमेशा तुम्हें ले बैठती है । कविराज ने कविताओं की परख के लिए एक पारखी भी अपने पास बैठा रखा था । तुम्हें चाहिए था कि उसे कुछ दे-दिलाकर पहले ही पटा लेते ताकि तुम्हारे काव्य की भी वह सराहना करता ।"

इसके बाद अनंत के तीनों मित्र बड़े खुश नज़र आने लगे । पर उनके स्वभाव में कोई परिवर्तन नहीं आया था ।

एक दिन बहादुर अनंत से बोला, "अच्छा, तो अब मेरी समझ में आया कि तुमने यह पुरस्कार कैसे पाया! तुम पर भगवान् कृपालु हुए थे । पर आदमी और आदमी के बीच इस कदर भेद-भाव करने वाले भगवान् को मैं क्यों मानूं? मुझे उसकी कृपा नहीं चाहिए । मुझे अपने पर भरोसा है । मैं अपने बल-बूते

पर ही सफलता पाऊंगा । मुझे ऐसे भगवान् पर विश्वास नहीं । वह दुश्मन है!''

रामदेव भी बहादुर से कहां पीछे रहने वाला था । एक दिन वह भी अनंत से बोला, ''अब तक मैं यही सोचता रहा कि तुमने बेहतरीन काव्य की रचना की होगी । इसे लेकर मैं तुमसे ईर्ष्या भी करने लगा । लेकिन अब पता चला कि तुमने किसी की चिरौरी करके अपने घटिया काव्य पर पुरस्कार प्राप्त किया है । इसीलिए मैं हमेशा भगवान् में विश्वास करता हूँ, मनुष्य में नहीं । मनुष्य को मैं भगवान्-तुल्य मानकर उसकी झूठी प्रशंसा नहीं कर सकता । महान काव्य लिखकर ही मैं पुरस्कार पाऊंगा ।''

धनपत ने भी अपनी तरह से नश्तर लगाया । बोला, ''अनंत, तुम जैसे पैसे देकर पुरस्कार खरीदने वाले जब तक इस पृथ्वी पर रहेंगे, श्रेष्ठता कभी पुरस्कृत नहीं हो सकती । इसी लिए गीदड़ों को सिंह का सम्मान मिलता है । तुम्हारी बात पर मैंने ग़ौर किया । मुझे अब विश्वास हो गया है कि अगर वाकई मेरे काव्य को श्रेष्ठता की कसौटी पर कसा जाता तो वह हर लिहाज़ से उस पर पूरा उतरता । पर दुर्भाग्यवश ऐसा नहीं हुआ ।''

अनंत को अब पता चल गया था कि उसने ऐसे लोगों की मित्रता चाही जो हमेशा दूसरों की खुचड़ करने पर तुले रहते हैं, उन्हें अच्छा तो कुछ दिखाई देता ही नहीं । वे हर शब्द का उल्टा अर्थ ही लेते हैं । इतने दिनों तक उनसे मित्रता बरकरार रखकर उसने काफी समय गंवाया था, उसे इस बात पर दुःख भी हुआ । वह अब अच्छी तरह समझ गया था कि एसे लोगों से मित्रता बनाये रखने में कोई बुद्धिमानी नहीं । इसलिए उसने उनसे मिलना-जुलना बंद कर दिया ।

पर बहादुर, रामदेव और धनपत अब भी उसी बरगद के पेड़ के नीचे हर शम मिलते हैं और एक-दूसरे को अपनी कविता सुनाकर इस संसार का पुण्य लूटते हैं ।

सीता का पता चलते ही राम के लिए पल भर भी रुकना दूभर हो रहा था । वह तुरंत सीता के पास पहुंचना चाहते थे । यह बात उन्हें बहुत खल रही थी कि सीता राक्षसियों के बीच घिरी हुई है । सीता ने जो संदेश हनुमान के माध्यम से भिजवाये थे, उन्हें याद कर राम आनंद-विभोर हो रहे थे । इसलिए वह उससे कुरेद-कुरेद कर सीता के बारे में पूछ रहे थे ।

तब हनुमान ने सीता द्वारा सुनायी गयी कौए वाली वह सारी बात सविस्तार राम को कह सुनायी ।

सब कुछ सुना चुकने के बाद हनुमान राम से बोला, "हां, सीता मां ने मुझ से यह प्रश्न ज़रूर किया : राम इतने शक्तिशाली हैं, फिर वह अपने अस्त्रों का प्रयोग करके राक्षसों का सफाया क्यों नहीं करते? उनसे कहो कि उन्हें यदि मेरे प्रति रत्ती-सा भी अनुराग है तो वह अविलंब लंका में पहुंचें और रावण को मौत की नींद सुला दें । वह यदि स्वयं नहीं आ सकते तो कम-से-कम लक्ष्मण को ही भेज दें । वे दोनों भाई यदि एक–साथ खड़े हो जायें तो देवों को भी हरा सकते हैं । तब वे मेरी इस तरह उपेक्षा क्यों कर रहे हैं? क्यों नहीं वे मेरी रक्षा करते? क्यों सब कुछ उन्होंने नियति पर छोड़ दिया है?--पर मैंने सीता मां को बताया कि आप दोनों भाई उनके कष्ट से बेहद दुखी हैं । मैंने उन्हें यह भी बताया कि शीघ्र ही उनके समस्त कष्ट दूर होंगे । वह डरी-सहमी थी । फिर उन्होंने चारों दिशाओं में अपनी दृष्टि घुमायी और अपने जूड़े से चूड़ामणि निकालकर मेरे हाथ पर रख

१८. वानर सेनाओं का प्रस्थान

दिया। मैंने उन्हें आश्वस्त किया कि राम-लक्ष्मण और सुग्रीव बहुत शीघ्र यहाँ सेनाओं के साथ पहुँचेंगे और रावण का अंत कर देंगे। इसलिए उन्हें किसी प्रकार की चिंता नहीं करनी चाहिए। और यह कहकर मैं वहां से चला आया।"

हनुमान की बातों से राम को बहुत ढाढ़स मिला। बोले, "इस हनुमान ने महान कार्य किया है। ऐसा काम किसी और के बस का नहीं था। समुद्र को पार करने वाले, हनुमान के अलावा, गरुत्मान और वायुदेव ही हो सकते थे। लंका में प्रवेश पाना और फिर वहां से सही-सलामत लौट आना, क्या यह कोई छोटी बात है? पहले तो वहां प्रवेश पाना ही अपने आप में एक बहुत बड़ी बात है। लेकिन सब से बड़ी बात यह है कि हनुमान ने अपने को सुग्रीव की आज्ञा-पालन तक ही सीमित नहीं रखा, बल्कि उसने अशोक वाटिका की ईंट से ईंट बजा दी, राक्षसों का एक-एक करके सफाया किया, और लंका को जलाकर राख कर दिया।

"यह सब कुछ किसी महाबली के लिए ही संभव था। इससे सुग्रीव को तो अत्यधिक संतोष हुआ ही, रघुवंश पर भी आंच नहीं आने दी। लेकिन मैं इस समय ऐसी स्थिति में नहीं हूं जिससे हनुमान का यथोचित सत्कार कर सकूं। इसलिए मैं किंचित दु:खी भी हूं।

"अपने इस उपकारी का, जिसने मेरे और सीता के प्राण बचाये हैं, मैं कैसे ऋण चुका सकता हूँ? आओ, मेरे मित्र, तुम मेरे गले लग जाओ। मैं इससे निकट तुम्हें और कैसे कर सकता हूं।" और यह कहकर राम ने बड़े प्रेम के साथ हनुमान को अपने आलिंगन में ले लिया।

लेकिन राम फिर उदास हो गये थे। हनुमान की ओर देखते हुए बोले, "सागर पार हमारी सेनाएं कैसे पहुँचेंगी? हम कैसे लंका नगर में कदम रख पायेंगे? और कैसे हम सीता को वहां से छुड़ा लायेंगे? इस सब के लिए, पहले हमारा वहां पहुंचना बहुत जरूरी है न? यह सब सोचकर मेरा दिल बैठा जा रहा है। सीता को तो तुम ढाढ़स दे आये, पर अब वास्तविक स्थिति का सामना कैसे किया जाये?"

इस बार उत्तर हनुमान ने नहीं, सुग्रीव ने

दिया, बोला, "चिंता क्यों करते हो, राम? यह क्या कम है कि हमें शत्रु के ठिकाने का पता चल गया है और सीता जी की खबर भी मिल गयी है? अब तो हमें केवल शत्रु को मिटना है। इसी से हमारी सारी समस्या का अंत होगा।

"हम सागर पर पुल का निर्माण करेंगे। हम रावण को समाप्त करेंगे और सीता को छुड़ा लायेंगे। जैसे ही सेतु का निर्माण-कार्य संपन्न होगा, वैसे ही समझो कि रावण का अंत हुआ। सेतु का निर्माण कर पाना संभव न हुआ तो हम कोई और उपाय सोचेंगे। लेकिन सागर-पार हम जायेंगे ही, और रावण का वध भी होगा ही। हमारी जीत निश्चित है। अब बात जब इतनी दूर चली आयी तो इसे कोई नहीं रोक सकता। सीता जी को वापस लाना हमारा पावन कर्तव्य है।"

राम अब फिर हनुमान की ओर देखते हुए कह रहे थे : "बेशक, हम सागर पर सेतु का निर्माण करके या उसे पूरी तरह सुखाकर या तप करके, किसी-न-किसी तरह लंका में पहुंच ही जायेंगे। अब यह बताओ, लंका में कितने दुर्ग हैं? रावण की सेना कितनी है? वहां नगर-द्वारों की रक्षा-व्यवस्था कैसी है? प्राचीरों की रक्षा कैसे की जा रही है? तुम ने तो यह सब अपनी आंखों देखा है। इसलिए थोड़ा विस्तार से बताओ।"

अब हनुमान को राम के मन की हालत का पता चला। यह बड़ा ही स्वाभाविक था। शत्रु पर युद्ध के लिए निकलने के पहले ये सभी

बातें जानने की होती हैं, ये बहुत जरूरी बातें होती हैं।

राम की जिज्ञासा को शांत करने के लिए हनुमान ने राम को जो उत्तर दिया, वह इस प्रकार था "लंका नगरी विशाल है। वहाँ असंख्य राक्षस हैं। सभी सुख-संतोष से हैं। रथ, हाथी और घोड़े भी वहाँ पर्याप्त मात्रा में हैं। वे हर कहीं दीख पड़ते हैं। नगर के चार द्वार हैं। उनके कपाट बहुत बड़े और बहुत मजबूत हैं।

"इन द्वारों के पास ही, युद्ध के समय बाणों और शिलाओं का प्रयोग करने के लिए, यंत्र हैं। ये यंत्र बहुत भयंकर हैं। द्वारों पर योद्धा राक्षस भी तैनात हैं। उनके पास ऐसे लोह-परिघ हैं जिनसे एक ही बार में सौ

व्यक्तियों का वध हो सकता है । नगर की प्राचीर सोने की बनी है । उस पर रत्नों की नक्काशी है । उसे लांघ पाना वैसे आसान तो नहीं है ।

"नगरी को चारों ओर से घेरती हुई गहरी और चौड़ी खाई है । खाई में हर समय काफी पानी रहता है । पानी में भयंकर मगरमच्छ और नरभक्षी मछलियां हैं । पर हर द्वार के निकट उस खाई को पार करने के लिए अनेक पुल हैं ।

"उन पुलों को, जरूरत पड़ने पर, उठाया और गिराया जा सकता है। ये पुल यंत्र-चालित हैं । रावण बड़ा ही जागरूक राजा है । वह हमेशा सतर्क रहता है । शांतिकाल में वह अपनी सेनाओं को खूब प्रशिक्षित करता है ।

"लंका नगरी त्रिकूट पर्वत पर स्थित है । नीचे से ऊपर की ओर पहाड़ पर जाने केलिए कोई मार्ग नहीं है । वास्तव में, लंका तक पहुंचने केलिए कोई सुगम मार्ग है ही नहीं, इसलिए वहां की खबरें बाहर की दुनिया को नहीं मिलती । पर वहां के सैनिक हमेशा तैयारी में रहते हैं । वे मुख्य द्वारों पर तो सतर्क रहते ही हैं, नगर के भीतर भी उतने ही सतर्क रहते हैं । मैंने खाई पर बनाये गये पुलों को नष्ट कर दिया था । लंका नगरी को जला डाला था ।

"कई राक्षसों का वध कर दिया था । इसलिए लंका में अब पहले जैसी बात नहीं । वहां की शक्ति काफी क्षीण हो चुकी है । बस, हमें समुद्र को पार करना है । विजय प्राप्त करने के लिए हमारे पास अंगद, द्विविद, मैंद, जांबवान और बनस जैसे वीर हैं ही । और फिर हमारा सेनाध्यक्ष नील! हमें अब बिलकुल विलंब नहीं करना चाहिए । अथवा मुहूर्त्त निकलवाकर लंका के लिए प्रस्थान कर देना चाहिए ।"

"ठीक है, हम अभी निकल पड़ेंगे ।" राम ने सुग्रीव को संबोधित करते हुए कहा, "सूर्य अब सर पर है । यह अभिजित मुहूर्त्त है । बड़ा ही शुभ है ।"

फिर उन्होंने सेना के संचालन-संबंधी निर्देश दिये और सुझाया कि सेनानायक नील को अपनी सेनाएँ ऐसे मार्गों से ले जानी चाहिए जहां खूब समृद्धि हो । "हां, एक बात का ध्यान

रखना होगा कि शत्रु पहले ही मार्गों और प्रदेशों को नष्ट न कर दें । दूसरे, इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि वह निचले प्रदेशों में छिपा रहकर एकदम से आक्रमण न कर दें । जिन मार्गों से हमारी सेनाएं जायेंगी, उन मार्गों का पहले से ही निरीक्षण कर लेना ज़रूरी होगा । इसके लिए हमारे कुछ सैनिक पहले आकाश के मार्ग से जायेंगे । और ये सैनिक वीर तो होंगे ही, श्रेष्ठ और पराक्रमी भी होंगे । दूसरों को जाने की जरूरत नहीं ।"

राम जैसे ही आगे बढ़े, उनके साथ सेना भी चल पड़ी । महाकाय गज, महाबली गवय और गवाक्ष सेना के आगे-आगे चल रहे थे । सेना के दायें पार्श्व की सुरक्षा की ज़िम्मेदारी ऋषभ की थी । वह उड़ान भरने में अद्वितीय था । सेना के बायें पार्श्व की सुरक्षा गंधमादन कर रहा था । राम और लक्ष्मण सेना के बीच में थे । राम हनुमान की भुजाओं की सवारी कर रहे थे और लक्ष्मण अंगद की भुजाओं की । यह सेना दक्षिण दिशा में आगे बढ़ती जा रही थी । सैनिक उछलते-कूदते हुए सिंहनाद कर रहे थे ।

वे मार्ग में मिलने वाले कंद-मूल का भी सेवन करते जा रहे थे । यह विशाल वानर सेना एक महासागर की तरह दीख पड़ रही थी । वह पहाड़ों, नदियों और जंगलों को पार करती हुई आगे बढ़ रही थी । आखिर वह महेंद्र पर्वत पर जा पहुंची ।

राम अब महेंद्र पर्वत के शिखर पर खड़े थे और समुद्र की ओर देख रहे थे । फिर उन्होंने सुग्रीव और लक्ष्मण को संबोधित करते हुए कहा, "मेरा ख्याल है हमें यहीं समुद्र तट पर पड़ाव डाल देना चाहिए और उन उपायों पर विचार करना चाहिए जिनसे हम सागर को पार कर सकें । कोई भी सैनिक इधर-उधर नहीं जाये । दूसरे, हमारी चौकसी भी कड़ी होनी चाहिए । यह सारा प्रबंध एकदम त्रुटि रहित होना चाहिए ।" और इन शब्दों के साथ वह पर्वत से नीचे चले गये ।

वानर सेना अब तीन भगों में बंट गयी थी और सागर किनारे रुकी हुई थी । पर सब के भीतर एक गहरा मंथन था—इतना विशाल सागर, जिस का न कोई ओर है, न छोर, जिस में भयंकर लहरें उठ रही हैं, जिसके गर्भ में भयंकर से भयंकर जीव हैं, इसे पार कैसे किया

जायेगा? सब सोच में डूबे थे और सभी के चेहरों पर चिंता की रेखाएं थीं ।

उधर लंका में हनुमान के कारण रावण का घोर अपमान हुआ था । शत्रु के लिए अभेद्य लंका नगरी में एक वानर बड़ी आसानी से प्रवेश पा गया था और उसने वहां वाही-तबाही मचा दी थी । चैत्य-प्रासादों को तो उसने नष्ट किया ही था, अनेक राक्षसों का भी उस ने वध कर दिया था ।

इसलिए रावण भी अब कम चिंतित नहीं था । उसने अपनी सभा बुला रखी थी और सभासदों से पूछ रहा था, "अब हमें क्या करना चाहिए? ऐसे उपाय सुझाइए जिससे लंका इस क्षति की पूर्ति कर सके ।"
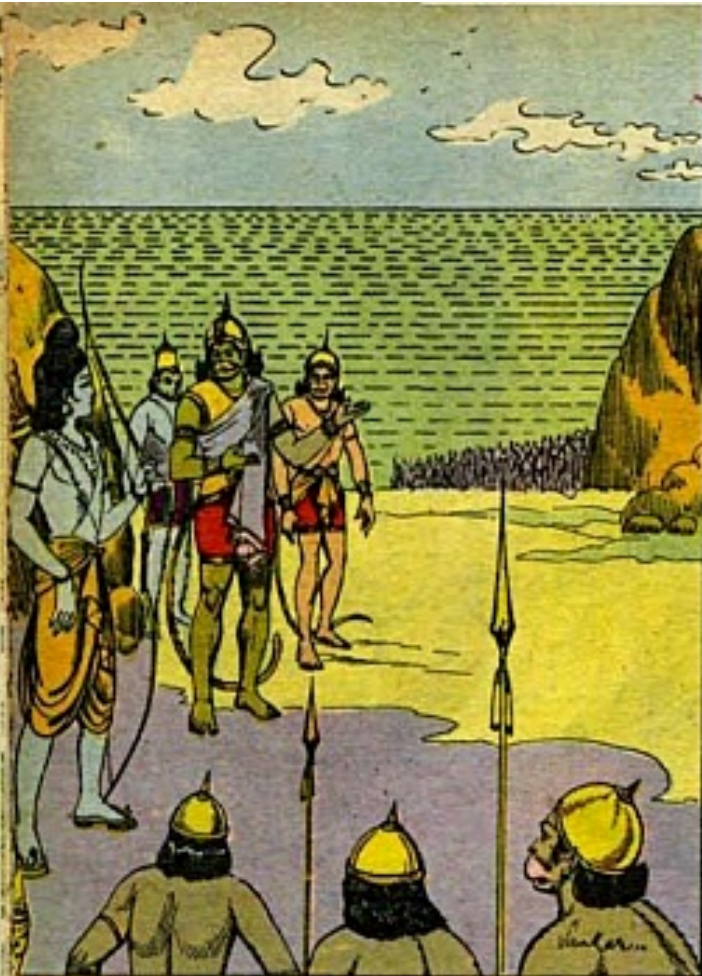
रावण की अपने सभासदों के साथ मंत्रणा चल ही रही थी कि सभाकक्ष में खबर मिली–राम लंका पर चढ़ाई करने को तैयार है और उसके साथ विशाल वानर सेना भी चली आ रही है ।

रावण को यद्यपि इसका पहले से ही आभास था, पर उसे आसानी से इस खबर पर विश्वास नहीं हुआ । किंतु अब उसे स्वीकार करना पड़ा कि जब राम ने चढ़ाई शुरू कर दी है तो वह और उसकी सेना सागर को भी पार कर ही लेंगे । रावण अब अपने सभासदों से यह जानना चाह रहा था कि जब वानरों और राक्षसों में युद्ध हो तो कैसे उसकी सेना की कम से कम क्षति हो और कैसे लंका नगरी को भी कोई खतरा न रहे ।

राक्षस तो डींगें मारना जानते ही थे । सभासदों में से कुछ बोले, "राजन्, हमारी सेना असीम है । हमारी युद्ध-सामग्री भी अद्‌भुत है । इतना कुछ हमारे पास है, फिर हमें चिंता किस बात की?"

फिर वे रावण की पूर्व-विजयों का बखान करने लगे । एक बोला, "आप तो महाबलियों के भी महाबली हैं । आप ने शिवजी के मित्र कुबेर को परास्त किया ।" दूसरा बोला, "आप ने पाताल के महासर्पों को भी धूल चटा दी ।" तीसरा बोला, "ऐसा कोई राजा नहीं है जिसने आपके हाथों मात न खायी हो! फिर यह राम किस बाग की मूली है । रही बात

वानरों के विराट् समूह की । तो उन्हें तो अकेला इंद्रजित् ही सदा की नींद सुला सकता है । इस में कोई संदेह नहीं । ''

प्रहस्त ने अपने ढंग से डींग मारी, ''राजन्! देव, दानव, गंधर्व, पिशाच, सब आपके सामने पानी भरते हैं । फिर इन वानरों की क्या बिसात! हनुमान इतना उत्पात तभी मचा सका जब हम सावधान नहीं थे । वरना क्या वह अपनी जान बचाकर यहां से निकल सकता था? आप आज्ञा दीजिए । मुझे समूची धरती के वानरों को नष्ट करने में ज़्यादा देर नहीं लगेगी । मैं एक भी वानर जीवित नहीं छोड़ूंगा ।''

दुर्मुख भी पीछे रहने वाला कहां था । उसने प्रतिज्ञा ली कि वह भी सभी वानरों का अंत करेगा ।

वज्रदंष्ट्र थोड़ा और आगे बढ़ गया । वह बोला, ''मैं अकेला ही सारे वानरों का खात्मा तो करूंगा ही, राम, लक्ष्मण और सुग्रीव को भी नहीं छोड़ूंगा ।'' उसके हाथ में परिघ था । उसने एक और उपाय भी सुझाया, ''हम राक्षस, मानव-रूप धारण करके, राम के पास जायेंगे और उसे बतायेंगे कि भरत ने उसकी सहायता के लिए सेना भेजी है और वह सेना, बस पहुंचने ही वाली है । इतने में हमारे कुछ योद्धा आकाश-मार्ग से जायेंगे और वानर सेना पर पत्थर बरसाना शुरू कर देंगे जिससे वह वहीं नष्ट हो जायेंगे । इस सब से राम और लक्ष्मण को ऐसा आघात पहुंचेगा कि वे वैसे ही प्राण त्याग देंगे ।''

अब बारी निकुंभ की थी । बोला, ''मैं अकेले ही राम, लक्ष्मण, सुग्रीव और हनुमान को मौत के घाट उतार दूंगा ।'' निकुंभ, कुंभकर्ण का पुत्र था ।

वज्रहनु बोला कि वह सारे वानरों को खा जायेगा और इसके साथ ही वह लार टपकाने लगा ।

अंत में सभी राक्षस उठकर खड़े हो गये । उन सब के हाथों में अस्त्र थे और वे युद्ध के लिए तैयार थे ।

उलूकागा

अफ्रीका के जंगलों में कई कबीले थे । उनमें से एक छोटे से कबीले के सरदार का नाम उलूकागा था । वहां एक और कबीला भी था । उसके सरदार का नाम ओहायो था । दोनों कबीलों के बीच कई सालों से दुश्मनी चली आ रही थी ।

ओहायो के कबीले में कई तगड़े नौजवान थे । उसका दल भी काफी बड़ा और मज़बूत था । फिर भी वे उलूकागा के दल का काम तमाम नहीं कर पा रहे थे ।

इसका एक खास कारण था । उलूकागा एक अद्‌भुत चिकित्सक था । वह कई प्रकार की जड़ी-बूटियां जानता था और उनसे एक खास तरह का मरहम तैयार करता था । घाव चाहे कैसा भी हो । बस, थोड़ा-सा लगा दो तो गहरे से गहरा घाव भी कुछ ही देर में भर जाता था । ज़हरीले बाणों के प्रभाव को भी यह मरहम सोख लेता था । उलूकागा के लोग जब दुश्मन का सामना करते हुए मौत के मुंह में भी फंसे होते तो भी उसकी दवा उन्हें बचा लेती और वे फिर लड़ने के लिए मैदान में उतर आते और युद्ध चलता रहता । यानी उलूकागा के लोगों की संख्या कम होने के बावजूद वे मैदान में डटे रहते । ओहायो के लोगों की संख्या बराबर घट रही थी ।

उलूकागा का एक पुत्र भी था । उसका नाम किथेंजी था । किथेंजी अपने पिता की अकेली संतान था, और कबीले का भावी सरदार भी था । उलूकागा ने उसे अपने सब अद्‌भुत औषधों के रहस्य बता दिये थे ।

अब ओहायो और उसके साथियों ने इस समस्या पर विचार किया । आखिर फैसला यही हुआ कि घात लगाकर उलूकागा और उसके बेटे का अपहरण कर लिया जाये ।

ओहायो और उसके साथियों ने जो सोचा

अफ्रीकी लोककथा

था, उसे पूरा कर दिया। उलूकागा और उसके बेटे किथेंजी का अपहरण कर लिया गया और उन्हें एक पहाड़ की चोटी पर शिलाओं से बांध दिया गया। फिर उन्हें खूब सताया गया, खूब तकलीफें दी गयीं। उन्हें बड़ी-बड़ी चींटियों से कटवाया गया। जंगली बबूल के कांटों से उनके पांवों के तलुओं और हथेलियों को छलनी कर दिया गया। इन तमाम तकलीफों को उन्होंने मुंह से एक बार भी उफ किये बिना सहा, पर अपने रहस्यों को बाहर नहीं आने दिया।

इतने में ओहायो का एक साथी दो काले, भयानक बिच्छुओं को वहां ले आया। बिच्छुओं को देखते ही किथेंजी मारे डर के बुरी तरह कांपने लगा।
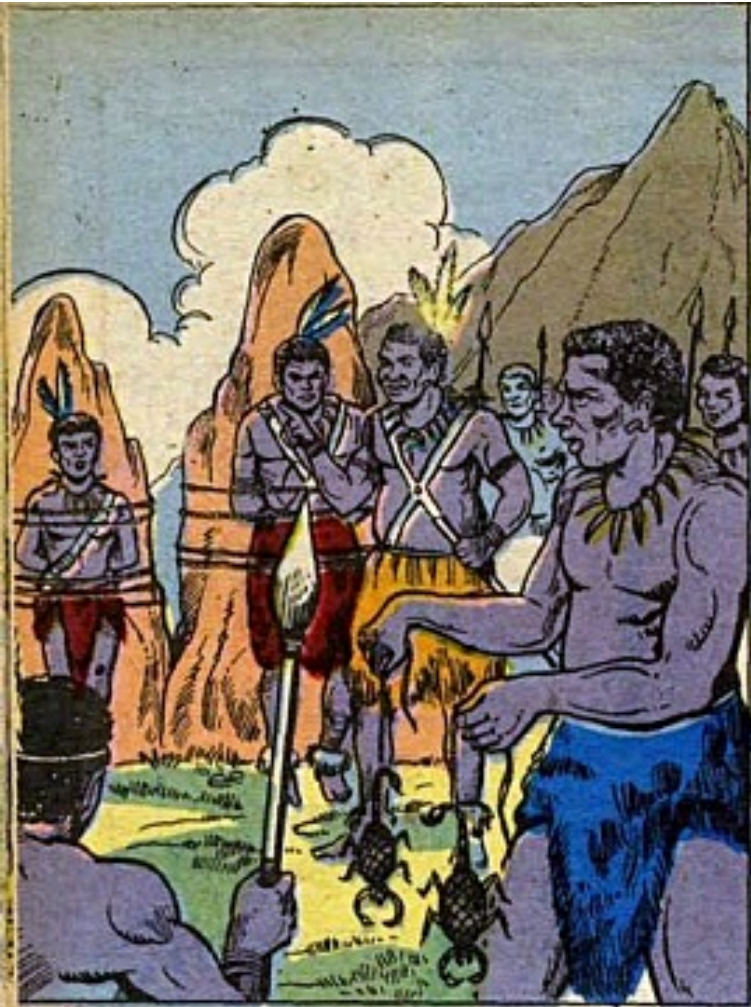
ओहायो की कर्कश आवाज सुनाई दी, "हमें वह विधि बताओगे कि तुम दोनों को इन बिच्छुओं से कटवाया जाये?"

उलूकागा ने एक बार अपने बेटे की ओर गौर से देखा। बेटा मारे डर के बिलकुल बेहाल हो रहा था। उलूकागा ने ओहायो से कहा, "ठीक है, मैं तुम्हें वह विधि बताऊंगा, पर पहले मुझे अपने एक नियम का पालन करना होगा। मैंने प्रतिज्ञा की थी कि मैं इन अद्‌भुत औषधों का प्रयोग केवल अपनी जाति के लोगों की भलाई के लिए ही करूंगा। ऐसी हालत में अगर मेरी जाति का कोई भी व्यक्ति मेरे सामने हो, चाहे वह मेरा बेटा ही क्यों न हो, और उसे यह पता हो कि मैं यह भेद बता रहा हूं, तो मेरी प्रतिज्ञा भंग होती है। इसलिए तुम लोग मेरे बेटे को खत्म कर दो। तभी मैं तुम्हें वह भेद बता सकता हूं।"

ओहायो को यह बात जंची। उसने अपना सर हिलाकर इशारा किया और उसके एक साथी ने उसकी आज्ञा पाकर अपने ज़हरीले बाण से किथेंजी का सीना चीर दिया। देखते ही देखते किथेंजी का शरीर काला पड़ गया और उसने प्राण छोड़ दिये।

उलूकागा अब आश्वस्त था। किथेंजी के मुंह से उस रहस्य के खुलने का भय जाता रहा।

उधर ओहायो ने उलूकागा के सारे बंधन खुलवा दिये थे। उलूकागा मुक्त था। ओहायो ने उसे अपने सामने एक शिला पर बैठाते हुए कहा, "उलूकागा, तुम्हारे कहने

पर हमने तुम्हारे बेटे को खत्म कर डाला । अब तुम्हारे सिवा उस रहस्य को जानने वाला और कोई नहीं । तुम हमें रहस्य बता दो ।"

उलूकागा उसी तरह शांत बैठा रहा । फिर बोला, "तुम लोगों ने मेरे बेटे को मरवा डाला, पर तुम यह नहीं जानते हो कि इसके साथ ही तुमने उस अद्भुत रहस्य को जानने का अवसर भी हाथ से गंवा दिया है ।"

ओहायो की समझ में नहीं आया कि उलूकागा क्या कहना चाहता है । उसने बड़ी कड़ाई से उसकी ओर देखते हुए कहा, "तुम्हारा आखिर मतलब क्या है? कहना क्या चाहते हो?"

"तो सुनो, ध्यान से सुनो । जब तुम लोगों ने हमें काले बिच्छुओं से कटवाना चाहा तो मेरे बेटे की, मारे डर के हालत खराब हो गयी । वह कांप रहा था, और उसकी आंखें ऊपर चढ़ गयी थीं । मैं समझ गया था कि ऐसे व्यक्ति से कोई भी बात उगलवाना ज्यादा मुश्किल नहीं होगा । इसीलिए मैंने चाहा कि उसे जल्दी से जल्दी खत्म हो जाना चाहिए । इसीलिए मैंने यह भी सुझाया कि उसे मार दो । लेकिन तुम लोग मेरी बातों में आ गये और तुमने वही किया जो मैं चाहता था । इस तरह तुम्हारे हाथ उस राज़ को जानने का जो मौका आया था, वह तुमने यों ही गंवा दिया । अब वह राज़ तुम मेरे मुंह से नहीं उगलवा सकते । मैं मौत से डरने वालों में से नहीं हूं । मैं अपनी जाति की भलाई के लिए कोई भी कुर्बानी दे सकता हूं । शत्रु मुझे इस तरह से नहीं डरा सकते । मैं अपनी जाति की किसी कीमत पर भी रक्षा करूंगा । मैं उसके विनाश का कारण नहीं बन सकता । हां, एक बात और । मैं यह भी अच्छी तरह जानता हूं कि मुझ से सब भेद लेकर भी तुम मेरी जान नहीं बख्शोगे । लेकिन मुझे अपनी जान से ज़्यादा अपने लोगों की जान की चिंता है । मैं यह कभी नहीं चाहूंगा कि मेरी जाति कमज़ोर होती जाये और तुम्हारी जाति मज़बूत होती जाये । मैं इस काम में तुम्हारा मददगार नहीं हो सकता ।"

और इन शब्दों के साथ ही उलूकागा ने वहां से छलांग लगा दी और घाटी में कूद गया ।

रानी बंदरिया

उन दिनों कांचीपुर राज्य पर राजा कनकसेन का राज था। उसने अपने राजभवन के पीछे एक बहुत सुंदर उद्यान तैयार करवाया था। उस सुंदर उद्यान में एक सुंदर सरोवर भी बनवाया गया था। सरोवर के चारों ओर बड़े-बड़े पेड़ थे।

एक दिन कांचीपुर की महारानी उस सरोवर में स्नान करने के लिए चली। सरोवर में उतरने से पहले उसने अपने सारे ज़ेवर अपनी परिचारिका के हवाले कर दिये। उन ज़ेवरों में एक नौलखा हार भी था।

परिचारिका ने वे ज़ेवर सरोवर के किनारे एक सुरक्षित स्थान पर रख दिये और स्वयं वह पेड़-पौधों से फूल तोड़ने में व्यस्त हो गयी। इतने में एक पेड़ पर से वहां रहनेवाली एक बंदरिया नीचे कूदी, धीरे-धीरे मटकते कदमों पर सरोवर की ओर बढ़ी और वह नौलखा हार लेकर चुपके से वापस पेड़ पर जा चढ़ी।

जिस समय बंदरिया ने वह नौलखा हार हथियाया था, परिचारिका की उस पर नज़र पड़ गयी थी। पर वह लाचार थी, कुछ कर नहीं सकती थी। महारानी नहाकर आयी और अपने कपड़े-जेवर पहनने लगी। "नौलखा हार कहां है?" उसने परिचारिका से पूछा।

"यहीं तो रखा था, बाकी ज़ेवरों के साथ।" परिचारिका ने कहा। वह महारानी की डांट-डपट के डर से असलियत छिपा गयी थी।

महारानी ने इसकी सूचना राजा को दी। राजा ने मंत्री को आदेश दिया कि सूर्यास्त से पहले चोर का पता लग जाना चाहिए। मंत्री ने तुरंत दण्डनायक को हिदायत की कि सूर्यास्त से पहले हार का पता चल जाना चाहिए।

दण्डनायक अपनी सेना की एक बहुत बड़ी टुकड़ी के साथ नौलखा हार के चोर का पता

लगाने निकल पड़ा। उसने नगर का कोना-कोना छान मारा। किसी को हार की कोई खबर न थी। हां, लोगों का यह विश्वास ज़रूर था कि इस हार का चोर कोई गरीब, बढ़ी दाढ़ी वाला होगा।

उधर सूर्यास्त हो रहा था। आस-पास के जंगलों को भी नहीं छोड़ा गया। आखिर एक ऐसा आदमी उनके हाथ लगा जो वाकई गरीब था, फटेहाल था, जिसकी दाढ़ी बढ़ी हुई थी। उसे कब्ज़े में ले लिया गया और राजा के सामने पेश किया गया।

"वह हार कहां छिपा रखा है?" राजा ने उस गरीब से बड़ी रोबीली आवाज में पूछा।

वह गरीब काफी डरा हुआ था। उसने सोचा कि असलियत बताऊंगा, तब भी कोई यकीन नहीं करेगा। इसलिए आयी बला को टालने के लिए उसने कह दिया कि वह हार उसने कोशाध्यक्ष को दिया था। इस पर कोशाध्यक्ष की पेशी हुई। अपने ऊपर लगे फिज़ूल के इल्ज़ाम को सुनकर कोशाध्यक्ष शशोपंज में पड़ गया। पर वह यह भी समझ रहा था कि ऐसी स्थिति में सच बोलेगा तो कोई उस पर विश्वास नहीं करेगा। इसलिए उसने फौरन कहा कि वह हार उसने राज ज्योतिषी को दिया था।

अब राज ज्योतिषी की पेशी हुई। उसके हाथ-पांव बंधे हुए थे। राजा ने उससे भी उसी रोबीली और कर्कश आवाज में बात की और जनना चाहा कि वह नौलखा हार कहां है। ज्योतिषी स्थिति की नज़ाकत समझ रहा था। उसने भी बला अपने सर से टालनी चाही। उसने झट से मंत्री के बड़े बेटे का नाम ले दिया।

तब तक काफी वक्त बीत चुका था। राजा ने तहकीकात का यह काम अगले दिन पर मुल्तवी कर दिया और आराम करने चला गया। जाते-जाते वह कह गया, "बाकी पूछताछ हम कल करेंगे। आज के लिए हम दरबार खारिज कर रहे हैं। बहरहाल, इन्हें तहखाने में बंद कर दिया जाये।"

उस रात मंत्री को नींद नहीं आ रही थी। उसे हैरानी हो रही थी कि कैसे मामला एक गरीब आदमी से उठा और कैसे वह होते-होते उसके बेटे तक आ पहुंचा। वह खुद ही उस आंच की लपेट में आ गया था।

मुझे और कुछ सूझा ही नहीं । मैंने यों ही आपका नाम ले दिया । मैंने सोचा आप इतने बड़े ज्योतिषी हैं, आप हकीकत जान जायेंगे!" यह आवाज़ कोषाध्यक्ष की थी जिसे मंत्री ने फौरन पहचान लिया ।

कोषाध्यक्ष के बाद राजज्योतिषी भी बोल पड़ा, "अरे भाई, डर बहुत बुरी चीज़ है । और फिर ऐसी तगड़ी चोरी का पता भला ज्योतिष से कैसे लगेगा? इसी लिए मुझे और कुछ नहीं सूझा तो मैंने फंदा मंत्री के बेटे की ओर फेंक दिया!"

अब मंत्री के कान खड़े हो गये थे । वह बिना एक पल भी वहां रुके सीधा राजा के पास पहुंचा और उसे तहखाने वाली सारी बात ज्यों की त्यों कह सुनायी ।

आधी रात हुई और वह तहखाने के पास पहुंचकर वहां छिपकर खड़ा हो गया । वह अपने कानों से सुनना चाहता था कि भीतर तहखाने में वे बंदी कैसी-कैसी बातें करते हैं ।

भीतर से पहले रोने की आवाज़ आयी । फिर वह आवाज़ बंद हो गयी । कोई कह रहा था, "क्षमा कीजिए, कोषाध्यक्ष जी । अपने ऊपर से खतरे को टालने के लिए मुझे यह झूठ बोलना पड़ा । मैंने तो ऐसा हार कभी देखा ही नहीं । सर पर आ बनी थी तो क्या करता ।"

स्पष्ट था कि ये शब्द उस गरीब के ही थे जिसे उसकी फटेहाली में गिरफ्तार कर लिया गया था ।

"आप भी मुझे क्षमा कीजिए, राज ज्योतिषी जी । खतरे को सर पर मंडराते देख

मंत्री की बात सुनकर राजा के कान भी खड़े हो गये । उसने एक लंबी सांस ली । उसे लगा कि बहुत बड़ा अन्याय होने जा रहा था । लेकिन साथ में वह असमंजस में भी था । हार फिर चुराया किसने?

सुबह हुई तो राजा ने महारानी की परिचारिका को बुलाया । परिचारिका कांपती हुई आयी । राजा ने उसे धमकाया और कहा, "सच, सच बताओ कि हार कहां गायब हुआ है, वरना तुम्हारी जान की खैर नहीं । तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े करवाकर कौओं-गिद्धों के सामने डलवा दूंगा ।"

परिचारिका की कंपकंपी अब और बढ़ गयी थी । मौत उसे स्पष्ट सामने मंडराती नज़र आयी । किसी तरह से उसके मुंह से

निकला, "महाराज, मुझे क्षमा करें। मैं निर्दोष हूं। सरोवर के पार एक पेड़ पर एक बंदरिया रहती है। मुझे उसी पर शक है!"

"तुम्हारा बंदरिया पर शक क्यों है!" राजा की जिज्ञासा जगी।

"मेरे शक का एक कारण है। मैंने जब उस बंदरिया को देखा तो वह भी महारानी जी की तरह इठलाती हुई, मटक-मटक कर चलने की कोशिश कर रही थी। महारानी जी जब स्नान करने सरोवर में उतरीं तो उसने भी स्नान करने का अभिनय किया। और तो और, उसने भी महारानी जी की तरह मंद-मंद हंसने की कोशिश की। यह सब मैंने अपनी आंखों से देखा।" परिचारिका का विनम्र उत्तर था।

पर राजा का गुस्सा परिचारिका का उत्तर सुनकर और बढ़ गया। उसके मन में आया कि इस परिचारिका को सूली पर चढ़ा दिया जाना चाहिए। फिर उसे नौलखा हार की याद आयी और अपने को काबू में किया।

"तो तुम कहना चाहती हो कि वह हार उस बंदरिया ने चुराया है? पर हमें यह कैसे पता चलेगा कि उसने वह हार कहां छिपाकर रखा है?" राजा ने प्रश्न किया।

"वह कोई बहुत बड़ी बात नहीं है।" परिचारिका ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया।

"बड़ी बात नहीं है! यह तुम कहती हो?" राजा का गुस्सा फिर चढ़ रहा था।

"महारानी जी नौलखा हार तभी पहनती हैं जब आप उनके पास होते हैं।"

परिचारिका ने कहा ।

"हां । पर इससे तुम क्या प्रमाणित करना चाहती हो?" राजा की भौंहें पहले की तरह चढ़ी हुई थीं ।

"सरकार, बेशक आप मुझ पर गुस्सा खा सकते हैं । मैं अब ज़्यादा विस्तार से बता नहीं सकती । लेकिन यह पता लगाने के लिए कि बंदरिया ने वह हार कहां छिपाकर रखा है, हमें पहले एक बंदर को कहीं से लाना होगा," पचारिका ने कहा ।

राजा पचारिका की बात समझ गया था । उसके होंठों पर हल्की-सी मुस्कराहट आ गयी । महारानी की तुलना बंदरिया से हो रही थी और राजा की बंदर से । फिर भी राजा चुप रहा । उसे तो किसी तरह नौलखा हार के चोर को पकड़ना था । इसलिए राजा ने आदेश दिया कि फौरन एक बंदर का इंतज़ाम किया जाये ।

बंदर लाया गया । उसे राजा की तरह सजाया गया । फिर राजा ने उसे अपने साथ लिया और साथ में मंत्री तथा अन्य कुछ दरबारियों को भी लिया गया । वे सब उद्यान की ओर बढ़े ।

बंदरिया वहीं पीपल के पेड़ पर बैठी थी । उसने राजा, उसके मंत्री और दरबरियों को आते देख लिया था । उसने उस बंदर को भी देख लिया था जो राजा की तरह सजा-धजा राजा के साथ-साथ चला आ रहा था । बंदरिया ने फौरन एक छलांग लगायी और पेड़ के कोटर में छिपाकर रखे गये नौलखा हार को पहनकर बंदर से मिलने पेड़ के नीचे उतर आयी ।

चोर का पता चल गया था । दरबारियों ने बंदरिया को अपने कब्जे में कर लिया और नौलखा हार उससे छीन लिया । बंदरिया बहुत चीखी-चिल्लायी और आखिर भागकर पीपल पर चढ़ गयी ।

महारानी का हार महारानी को वापस मिल गया । साथ ही सब बेगुनाह बंदियों को बाइज्जत छोड़ दिया गया ।

हां, परिचारिका की बुद्धि की राजा को दाद देनी पड़ी । उसने उसे पुरस्कृत भी किया ।

योग्य वर

विजयपुरी के राज-दरबार में रामशर्मा नाम का एक महान ज्योतिषी था।

एक दिन वह सूर्योदय के समय नदी से स्नान करके लौट रहा था तो उसने रास्ते में एक पेड़ की शाखा से फांसी लगाकर मरने को तैयार एक युवक को देखा। उसने ज़ोर से डांट लगाते हुए उस युवक को पुकारा, "यह क्या करने जा रहे हो? कौन हो तुम?"

"मैं विजयपुरी में रहता हूं। मेरा नाम जयसिंह है।" युवक ने सहमे-सहमे कहा।

"अभी पच्चीस तो पार नहीं किये होगे। ज़िंदगी से ऐसी ऊब क्यों?" रामशर्मा ने पूछा।

"क्या करूं, जिससे प्यार करता था, उससे विवाह नहीं कर पा रहा।" जयसिंह की आवाज़ में दर्द था।

"ज़रा अपना हाथ दिखाओ।" और यह कहते हुए रामशर्मा ने उस युवक का हाथ अपने हाथ में लेकर उसे पढ़ना शुरू कर दिया। फिर उससे बोला, "क्या बात है? इतना बढ़िया योग है, और तुम कह रहे हो कि शादी नहीं हो पा रही। तुम्हारी शादी उसी लड़की के साथ होगी जिसे तुम चाहते हो।"

"मुझे आप पर विश्वास नहीं हो रहा।" जयसिंह ने कातर दृष्टि से देखा।

"मेरा नाम रामशर्मा है। मैं विजयपुर राज्य का राज-ज्योतिषी हूं। समझे?" रामशर्मा ने बड़े गर्व से कहा।

"पर मैं आपके ज्योतिष पर कैसे विश्वास करूं? मैं अब्राह्मण हूं और मैं प्यार एक ब्राह्मण कन्या से करता हूं। उसके मां-बाप इस विवाह के लिए कभी राज़ी नहीं होंगे?" जयसिंह ने थोड़ी निराशा दिखायी।

"ललाट पर लिखा हो तो उसे कौन मिटा सकता है? जब तुम्हारे सब ग्रह तुम्हारे साथ हैं, तब कोई भी बाधा तुम्हारे आड़े नहीं आ

प्रकाश श्रीवास्तव

सकती । लड़की का पिता इस विवाह के लिए जरूर स्वीकृति देगा ।" रामशर्मा ऐसे बोला जैसे कि वह अभयदान दे रहा हो ।

"एक बात और । उस लड़की का परिवार धनी है, मैं लगभग कंगाल हूं । तब यह रिश्ता कैसे बैठ पायेगा?" जयसिंह ने फिर प्रश्न किया ।

"इसमें क्या दिक्कत है ।" रामशर्मा ने किंचित मुस्कराते हुए कहा, "अगर लड़की का पिता धनी है तो वह अपनी संपत्ति का कुछ भाग तुम्हें भी दे सकता है । इससे तुम्हारी कंगाली धुल जायेगी ।"

"आप ठीक कहते हैं । पर लड़की का पिता राज-दरबार में किसी बड़े पद पर है । मैं पढ़ा-लिखा तो ज़रूर हूं, पर बेकार हूं । एक बेरोज़गार को अपना दामाद बनाने के लिए एक संपन्न व्यक्ति क्यों तैयार होगा?" जयसिंह ने फिर शंका व्यक्त की ।

"यह भी कोई बात है । वह बड़े पद पर है तो तुम्हें फौरन राज-दरबार में ही नौकरी दिलवा सकता है ।" रामशर्मा ने जयसिंह की शंका को ठंडा किया ।

"आपकी बातों ने मेरी आशा बंधायी है । मुझे अब विश्वास हो गया है कि मैं उसी लड़की के साथ विवाह कर सकूंगा ।" और यह कहते हुए जयसिंह ने रामशर्मा को साष्टांग प्रमाण किया ।

"अच्छा, अब यह बताओ कि तुम्हारा किस लड़की से प्यार है, और उसके पिता का नाम क्या है? " रामशर्मा ने सस्नेह प्रश्न किया ।

"पिता का नाम तो पंडित रामशर्मा है और उनकी बेटी का नाम कावेरी है । यह उनकी दूसरी लड़की है ।" जयसिंह ने रहस्य बनाये रखते हुए कहा ।

"ओ, तो यह बात है । तुम तो छिपे रुस्तम निकले । तुमने तो मुझे ही फांस लिया ।" रामशर्मा की हंसी रोके न रुकती थी । "पर मैं तुम्हारे बुद्धिकौशल और सूझबूझ का क़ायल हो गया हूं । तुम्हारी शादी मेरी बेटी के साथ ही बड़ी धूमधाम से होगी ।"

और यह कह कर रामशर्मा ने जयसिंह को अपने गले लगा लिया ।

लुप्त होता जा रहा नयागरा

भूगर्भ शास्त्रियों का कहना है कि अमरीका और कैनेडा, दोनों देशों से दिखने वाला और यात्रियों को आनंद-विभोर करने वाला नयागरा जल-प्रपात धीरे-धीरे लुप्त होता जा रहा है, और एक दिन यह एक साधारण प्रवाह का रूप ले सकता है ।

यह महावेगी प्रपात १०,००० वर्ष पहले अस्तित्व में आया था, लेकिन अगले २०,००० वर्षों में यह मात्र एक साधारण-सी नदी बनकर रह जायेगा । जहां यह गिरता है, वहां नीचे चूने के पत्थर हैं जिन्हें यह खत्म करता जा रहा है ।

पेंग्विन पक्षी

दक्षिणी ध्रुव (एंटार्किटा) की सोचते ही वहां बर्फ पर छोटे-छोटे पग भरते, इधर-उधर फुदकते पेंग्विन पक्षियों की याद हो आती है ।

दक्षिणी ध्रुव में भारी संख्या में दिखने वाले ये प्राणी उत्तरी ध्रुव (आर्कटिक) में नाम-मात्र को भी नहीं दिखते । इनकी सत्रह किस्में हैं ।

पीती है, खाती नहीं

मकड़ी क्या अपने भोजन को खाती है?—नहीं, वह उसे केवल पीती है । क्योंकि नली के आकार का उसका मुंह केवल पी ही सकता है, खा नहीं सकता । इसके मुंह से एक द्रव निकलता है जो कीड़े-मकोड़ों को गला देता है और मकड़ी उस गले पदार्थ को चूस लेती है ।

टैरंटुला नाम का एक मकड़ा चूहों और छोटे-छोटे पक्षियों तक को एक ही दिन में अपने द्रव से गला देता है और फिर उन्हें भोजन के रूप में चूस जाता है ।

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां फरवरी १९९२ के अंक में प्रकाशित की जाएंगी।

M. Natarajan

M. Natarajan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० दिसम्बर '९१ तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियां केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अक्तूबर १९९१ की प्रतियोगिता के परिणाम

प्रथम फोटो : दोस्ती अपनी सदा सुहानी!

द्वितीय फोटो : प्यारी सी है एक कहानी!!

प्रेषिका : कु. वर्षा चंदन, ८७, रघुनाथपुरा, जम्मू-१८० ००१

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

सवाल बच्चों के भविष्य का ....

जीवन बीमा का कोई विकल्प नहीं

भारतीय जीवन बीमा निगम